अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-40, अंक-18, 1-15 मई, 2017

गणेश शंकर विद्यार्थी को नमन्!

1 मई : श्रमिक-दिवस

❑ जहां शासन ही सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद चोर रास्ते निकालना चाहती है, वहां फिर कानून का राज कैसे पनप सकता है?

- न्याय. चन्द्रशेखर धर्माधिकरी

❑ ...अब किसान मजदूर बन जायेंगे।

- डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा

❑ अगर आपको लड़ना है तो अखबार और टीवी से लड़ने की सोचिये। पत्रकारिता को बचाने के मोह में फंसे रहने की जिद छोड़ दीजिए।

- रवीश कुमार

"जब किसी के बारे में लिखो तो यह समझ कर लिखो कि वह तुम्हारे सामने बैठा हुआ है और तुमसे जवाब तलब कर सकता है।"

- गणेश शंकर विद्यार्थी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 40, अंक : 18, 01-15 मई, 2017

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
मो. : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. बहुमत का अधिनायकवाद और... 2
2. शराबबन्दी को टालती सरकारें.... 3
3. गणेश शंकर विद्यार्थी : सत्याग्रह और... 4
4. वक्त बहुत कम है, रफ्तार बहुत तेज... 6
5. मेरी पांति : किसान-मजदूर भाई... 8
6. राष्ट्रों को श्रीहीन करती बहुराष्ट्रीय... 10
7. वैकल्पिक रास्तों की खोज... 11
8. गुलामी को न्यौता देने वाली स्मार्ट... 13
9. कछुआ और खरगोश... 17
10. कविताएं... 20

संपादकीय

बहुमत का अधिनायकवाद और लोकतंत्र

भारत में लोकतंत्र का स्रोत भारत के स्वातंत्र्य आंदोलन की विभिन्न धाराओं में थी, जिसको अभिव्यक्त करने की कोशिश भारतीय संविधान के माध्यम से की गयी। स्वतंत्रता के आंदोलन में भारत के सभी प्रकार की पहचानों और अस्मिताओं की विविधताओं के बीच एक एकता के निर्माण का प्रयास भी परिलक्षित होता था। एकता के निर्माण की खूबसूरती यह थी कि विविधताएं अपने गुणों एवं विशिष्टताओं को बिना खोये, एक सूत्र में बंध सकें। एक-दूसरे का सम्मान कर सकें तथा एक-दूसरे को सम्बल प्रदान करें। इस प्रकार एकता निर्माण विविधताओं को समृद्ध करने वाली एक प्रक्रिया थी। इस रूप में भारत एक लघु-विश्व का स्वरूप विकसित कर रहा था। वैश्विक समुदाय की एकता भी इसी में निहित है कि विविधताओं की समृद्धि सह-अस्तित्व के साथ हो। भारत में जितनी विविधताएं थीं/हैं, उतनी विविधताएं विश्व के किसी अन्य देश में स्वाभाविक रूप से नहीं हैं। भारत अपनी इसी विशिष्टता के कारण, विश्व-समुदाय की एकता का मॉडल बन सकता था। विश्व समुदाय की एकता के लिए प्रयत्नशील लोग भारत की इस समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा से काफी कुछ सीख भी रहे थे। गांधी की वैश्विक स्वीकार्यता इसी संदर्भ में है।

लोकतंत्र का वर्तमान स्वरूप भारत की इस गौरवशाली धरोहर को कमजोर करने का माध्यम बनता जा रहा है। संसद एवं विधान सभाओं में बहुमत प्राप्त करने वाले यह दावा करने लगे हैं कि भारत को एकरूप (uniform) बनाना है। एकरूपता ही एक देश, देश की एकता का माध्यम बन सकता है। जिसकी तार्किक परिणति यह है कि जो एकरूपता की ओर बढ़ने के प्रयास के विरोधी हैं, वे देशद्रोही हैं। देश-भक्ति यानी एकरूपता, विविधता का समर्थन यानी द्रेशद्रोह। स्वतंत्रता आंदोलन की विरासत को यह लोकतंत्र रसातल तक ले जाने का माध्यम बन रहा है। गांधीजी ने ब्रिटिश लोकतंत्र के लिए कहा था कि यह बांझ है। क्योंकि यह अपने से आदर्श की रचना करने एवं आदर्श की ओर बढ़ने के बजाय, बाहर जो दबाव बनते थे, उन दबावों के प्रभाव में संसद कार्य करती थी। आज हम कह सकते हैं कि इन परिस्थितियों ने वोट-सामंतवाद को जन्म दिया। किसी समूह का नेतृत्व करने का दावा करने वाला, उस समूह के तात्कालिक हित को बढ़ाने के लिए उस समूह को एक ऐसी चेतना में बांध देता है कि वह अपने को एक वोट-बैंक में तब्दील कर लेता है।

यह स्थिति दो कारणों से उपजी। एक तो यह कि लोक समुदाय व लोकसत्ता निर्माण की दिशा में हम आगे नहीं बढ़े। उलटे लोक समुदाय एवं लोकसत्ता को कमजोर से कमजोर करने के प्रयास हुए। लोकसत्ता व लोक समुदाय के कमजोर होने से लोकतंत्र नींव विहीन हो गया। संगठित लोक ही अपना प्रतिनिधि चुन सकेगा। वोट बैंक केवल अपने वोट-सामंत के प्रति निष्ठा व्यक्त कर सकता है।

दूसरे विभिन्न समुदायों, संस्कृतियों, अस्मिताओं एवं पहचानों के बीच सार्थक संवाद राजनीति के माध्यम से नहीं बल्कि लोकनीति व समाज नीति के अंतर्गत ही संभव है। ये विविधताएं आपस में ऐसा संवाद कायम करें, जिससे ये आपस में एकता का निर्माण करते जायें। इस संवाद प्रक्रिया में ऐसे मूल्यों को विकसित करते जायें, जिनसे एकता भी पुष्पित-पल्लवित हो एवं विविधताएं भी पुष्पित-पल्लवित होती जायें।

राजनीति के बाहर, राजनीतिक पार्टी व्यवस्था के बाहर लोक-नीति व समाज-नीति के पक्षधर लोगों को यह दायित्व चुनौती के रूप में स्वीकार करना होगा। जब लोक सत्ता के गतिशील एवं प्रभावी बने रहने के रास्ते बंद किये जाने लगते हैं, तो बहुमत का अधिनायकवाद अपना जाल बिछाने लगता है। और, बहुमत का अधिनायकवाद, राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया को बुरी तरह क्षतिग्रस्त करने लगता है। दूसरे, लोकनीति व समाज नीति आधारित आंदोलनों को विविधताओं की लघु इकाईयों में आंतरिक शक्ति मजबूत करने का भी काम करना होगा। बिमल कुमार

शराबबंदी को टालती सरकारें

❑ **न्या. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी**

किसी भी हाइवे से शराब की दुकानें कम-से-कम 500 मीटर की दूरी पर हों—सर्वोच्च न्यायालय के इस आदेश को लेकर शराब ठेकेदारों, शराब उत्पादकों और स्वयं लोक कल्याणकारी सरकारों में बवाल मचा है। स्थानीय निकायों से लेकर राज्य सरकारें तक अब शराब दुकानों के आसपास से गुजरने वाले स्टेट या नेशनल हाइवे को 'डी-नोटिफाई' करने में लग गयी है। ताकि 'न बांस रहे, न बांसुरी।' दो दिन पहले राजस्थान सरकार ने ही कई स्टेट हाइवे 'डी-नोटिफाई' किये हैं। प्रस्तुत है इसी विषय पर मुम्बई उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश चन्द्रशेखर धर्माधिकारी का यह लेख। **–सं.**

सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्र तथा प्रदेश सरकारों को आदेश दिया है कि नेशनल या स्टेट हाइवे पर 500 मीटर के अंदर, जो शराब की दुकानें हैं, होटल या रेस्टोरेण्ट हैं, उन्हें 1 अप्रैल से बंद किया जाये और उनके लाइसेंस का नवीनीकरण न हो। इस आदेश के अनुसार ये दुकानें बंद की गयी। इस बाबद की कारण-मीमांसा करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि शराब पीकर मोटर चलाने वाले ड्राइवरों से ही अधिकतर दुर्घटनाएं होती हैं और उसमें मरने वालों की संख्या सबसे अधिक है। *सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय के खिलाफ सिर्फ शराब की दुकान, होटल या 'पब' के मालिकों ने ही नहीं प्रतिष्ठित अखबार और उच्च भ्रू तथा अमीर लोगों ने इस न्यायालयीन फैसले पर टीका-टिप्पणी की और कहा कि सर्वोच्च न्यायालय को उपदेश देने से बाज आना चाहिए। न्यायालयों को अपनी सीमित भूमिका निभानी चाहिए एवं सीमा की मर्यादा भंग नहीं करना चाहिए तथा नैतिकता की बात नहीं करनी चाहिए। भारत के प्रमुख अखबारों की यह भाषा कष्टपूर्ण तो है ही, परंतु मन को विचलित करने वाली भी है। इसमें संविधान तथा कानून के मूलतत्त्वों के प्रति अज्ञान भी झलकता है तथा यह कानून तथा नीति मूल्यों के विरोधी भी है। सबसे पहले यह समझ लेना चाहिए कि शराब का उत्पादन करना, व्यापार करना किसी का भी संवैधानिक मूलभूत अधिकार नहीं है। कई वर्षों पूर्व सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया था कि संविधान की धारा 19 के अंतर्गत जो वृत्ति, आजीविका, व्यापार या कारोबार करने का अधिकार है, उसमें व्यसनों एवं शराब आदि के अधिकार निहित नहीं है।*

जब भारत का संविधान बन रहा था, तब जो चर्चा चल रही थी, उस दरम्यान कहा गया कि धारा 21 में निहित जीवित रहने के अधिकार से सह संबंधित आत्महत्या का भी मूल अधिकार होना चाहिए। तब *जवाहरलाल नेहरू* ने कहा था *'क्या वाहियात बात कर रहे हैं।'* इसलिए जो यह कहते हैं कि शराब का व्यापार करने का अधिकार मूल अधिकार है, उन्हें यही जवाब देना होगा। व्यसन या शराब पीने का परिणाम व्यक्ति तक ही सीमित नहीं रहता। यह केवल सामाजिक या नैतिक प्रश्न भी नहीं है, बल्कि उसका गरीब आदमी से सीधा संबंध है, जिसकी कमाई का बहुत बड़ा हिस्सा इस शराबखोरी में खर्च हो जाता है। गरीब की गरीबी कभी भी समाप्त न हो, इसलिए पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का व्यसनों का व्यापार उस गरीब के खिलाफ एक षड्यंत्र है।

इसके कारण शराब का अवैध व्यापार बढ़ेगा और शराब बेचने के व्यापार में जुड़े कई लोगों की नौकरी समाप्त होगी और बेरोजगारी बढ़ेगी, ऐसी दलीलें भी दी जा रही हैं। इस संदर्भ में **राष्ट्रपिता महात्मा गांधी,** जिनका नाम हर राजनीति पक्ष रोज लेता है या जिस महात्मा को प्रातः स्मरणीय माना जाता है, उनके वचन या कथन यहां उद्धृत करना मुनासिब होगा। गांधीजी ने कहा था कि "अगर उन्हें एक घंटे के लिए हुकुमशहा नियुक्त किया गया, तो वे सर्वप्रथम कोई मुआवजा न देते हुए शराब की दुकानें बंद करेंगे।" उन्होंने आगे यह भी कहा कि "अवैध शराब कुछ प्रमाण में शुरू रह सकती है, लेकिन उसका प्रमाण सरकार की कार्यक्षमता या कार्यक्षमता पर अवलंबित होगा। चोरी, यह शायद दुनिया के अंत तक चलती रहेगी, इसलिए क्या उसे कानूनी करार देना चाहिए?" यह प्रश्न भी उन्होंने उठाया था। यह स्पष्ट कर दिया था कि "शराब से मिलने वाले पैसों पर निःसंकोच और अविलंब पानी छोड़ देना चाहिए।" कुछ लोग बेरोजगार होंगे इसलिए निष्पाप लोगों को एक्सीडेंट में मरने देना चाहिए? यह अर्थशास्त्र सिर्फ अनर्थशास्त्र ही नहीं वह तो विपत्तिशास्त्र है।

कानून में से चोर रास्ते निकालने वाले व्यक्ति हमने देखे हैं। लेकिन आज तो शासन ही ऐसे चोर रास्ते ढूंढ़ रहा है, इसका अनोखा दर्शन सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय के बाद हो रहा है। शासन ही ऐसे जो रास्ते खोज रही है, उसमें से एक है कि स्टेट हाइवे को म्युनिसिपल रास्ते में परिवर्तित कर देना। अवैध को वैध बनाने के तरीके शासन ही खोज रहा है। कुछ नगर परिषदें भी इसमें शामिल हैं। महाराष्ट्र में जालना और लातूर नगर परिषदों ने तो प्रस्ताव पास कर जो हाइवे उनके नगर परिषद के आहते में से जाते हैं, उसे 'डी-नोटिफाय' करने का निर्णय ले लिया है, तो टाइम्स ऑफ इंडिया के वृत्त के अनुसार भारतीय जनता पार्टी का शासन जहां है, वह महाराष्ट्र शासन भी मुम्बई और पुणे

जैसे महानगर में से गुजरने वाले हाइवेज को उस दर्जे से हटाने का प्रयास कर रहा है। *अब तो जहां शासन ही सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद चोर रास्ते निकालना चाहती है, वहां फिर कानून का राज कैसे पनप सकता है? यह सारी स्थिति दयनीय और निन्दनीय है, इतना ही नहीं तो अनैतिक भी है।* जो बार, रेस्टोरन्ट्स होटल पांच सौ मीटर से अधिक अंतर पर अपने प्रस्थापनाओं को पुनःस्थापित करना चाहते हैं, उनसे शासन कोई शुल्क लिए बिना ऐसी पुनः स्थापना की खुलेआम इजाजत देगी, ऐसा मंत्री महोदय ने ही घोषित किया है। जिससे कि शराब पीकर मोटर चलाने वाले मोटर चलाते रहेंगे, एक्सीडेंट होते रहेंगे, और निष्पाप लोगों की जाने जाती रहेंगी। आखिरकार मरने वाले हमारे रिश्तेदार थोड़े ही हैं? ऐसे रास्ते ढूंढ़कर सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की अनदेखी की जायेगी यही 'कानून के राज' की सबसे बड़ी शोकांतिका है।

यह भी दलील दी जा रही है कि उच्चतम न्यायालय के निर्णयानुसार शराब बेचने वाली दुकानें, बंद होने से शराबखोरी बंद होने वाली नहीं है और न ही शराब पीने वाले कम होंगे। यह दलील भी खोखली है। क्या इसलिए मोटर वाहन चलाने वाले ड्राइवर को खुलेआम उसके हाथ में शराब का गिलास पहुंचाने की व्यवस्था करना शासन का कर्तव्य है? 'प्रिव्हेन्शन इज् बेटर देन क्युअर' कहने वाले सुरक्षा के कदम भी नहीं उठाना चाहते? पहली बार जब श्मशान में इलेक्ट्रिक से दहन करने की योजना अस्तित्व में आयी, तब कहा गया था कि श्मशान में लकड़ी बेचने वाले बेरोजगार होंगे? क्या उन इंसानों के मौत के व्यापारियों का धंधा चले, इसलिए उनके लिए रोज मरने वालों का 'कोटा' निश्चित करना चाहिए? यह सारी आदमखोरी के लिए दी जाने वाली दलीलें अमानवीय है। लेकिन आज सज्जन निष्क्रिय हो रहे हैं और दुर्जन सक्रिय हो रहे हैं, यही असली लोकतंत्र तथा न्यायतंत्र की शोकांतिका है। ❑

1 मई : श्रमिक-दिवस

गणेश शंकर विद्यार्थी : सत्याग्रह और क्रांतिकारी आंदोलन के पथिक

❑ **रेशम भारत व भारत डोगरा**

गणेश शंकर विद्यार्थी का नाम स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में अजर-अमर है। इस महान स्वतंत्रता सेनानी ने कलम और वाणी के साथ-साथ महात्मा गांधी के अहिंसावादी विचारों और क्रांतिकारियों को समान रूप से समर्थन और सहयोग दिया। आजादी के दीवानों को ताकत देने के साथ ही साथ उसे निष्पक्ष और समाजोपयोगी तेवर देने वाले पत्रकारों में सबसे अग्रणी विद्यार्थीजी ने अपनी जिन्दगी अपने मूल्यों के लिए लड़ते हुए दी थी। उनकी मौत स्वाभाविक नहीं थी इसीलिए उन्हें पहला शहीद पत्रकार कहा जाता है, प्रस्तुत है यह आलेख। **–सं.**

भारत की आजादी की लड़ाई को प्रायः गांधीजी के नेतृत्व के सत्याग्रह और क्रांतिकारी आंदोलन के दो अलग रास्तों के रूप में देखा जाता है। गणेश शंकर विद्यार्थी एक ऐसे अद्वितीय स्वतंत्रता सेनानी थे, जिनके हमसफर साथी इन दोनों राहों पर चलने वाले पथिक थे। दोनों रास्तों से उन्हें बहुत-सा प्यार मिला, सम्मान मिला। हमारी आजादी की लड़ाई एक ओर अंग्रेजी राज से मुक्ति की लड़ाई थी, तो दूसरी ओर यह एक नया भारत बनाने का एक रचनात्मक संघर्ष भी था। अधिकांश वीरों ने ऐसा भारत बनाना चाहा जो न्याय, समता और भाईचारे पर आधारित हो, जिसमें शोषण व भूख न हो, जिसमें लोग परस्पर प्रेम व सदभावना से रहें। इन आदर्शों को पूरी तरह निभाने वाले एक बहुत प्रेरणादायक स्वतंत्रता सेनानी थे— गणेश शंकर विद्यार्थी।

वे स्वतंत्रता सेनानी थे, प्रखर संपादक व लेखक थे, मजदूरों व किसानों की आवाज थे। सभी मजहबों की आपसी एकता के प्रतीक थे। कितने ही दीन-दुखियों की सेवा के लिए व अपने परिवार के भी परम स्नेही थे। उन्हें जीवन तो बहुत कम मिला था, पर इस काम आयु में उन्होंने जो प्राप्त किया वह बहुत लंबी आयु के होनहार, मेहनती व्यक्तियों के लिए भी दुर्लभ है। बहुत कम आयु में ही वे सामाजिक जागृति के क्षेत्र में आ गये और उसके बाद जैसे अपने एक-एक पल को निचोड़ कर उन्होंने समाज की भरपूर सेवा की। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी, अपने हितों से ऊपर उठकर, समाज के लिए क्या कुछ कर सकते हैं, इसका बहुत प्रेरणादायक उदाहरण उन्होंने सबके सामने रखा। गणेशशंकर विद्यार्थी के व्यक्तित्व में कुछ ऐसी खूबियां थीं, जिनके कारण स्वतंत्रता संग्राम के नम्र या उदार पंथियों से लेकर उग्र पंथियों, क्रांतिकारियों, शोषित जनता और तत्कालिक साहित्यिक व बौद्धिक जगत की हस्तियों तक ने उन्हें अपना माना। हर सच्चे देशभक्त की भावनाओं के प्रति गहरी संवेदना रखते हुए उनके हित का चिन्तन करना—यह व्यापक दृष्टि उन्हें सब धाराओं का अपना बनाती थी; पर किसी एक ओर बहकर वे अपनी मौलिक पहचान भी नहीं खोते थे। उनका मेहनती स्वभाव, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा, शालीनता, स्पष्टवादिता और दूसरों की किसी भी प्रकार से मदद करने की दृढ़ इच्छा शक्ति उन्हें विभिन्न संघर्षरत लोगों

के करीब लाती थी। उनके व्यक्तित्व में तनिक भी अहंकार नहीं था, पर दूसरी ओर आत्मसम्मान गहराई तक था।

नवंबर 1913 में गणेश शंकर विद्यार्थी, शिवनारायण मिश्र, नारायण प्रसाद अरोड़ा आदि कुछ मित्रों ने मिलकर कानपुर से *'प्रताप'* नामक एक साप्ताहिक पत्र निकालना शुरू किया। तब से लेकर अपनी मृत्यु तक काफी समय विद्यार्थीजी इस पत्र के संपादक रहे। 'प्रताप' जनता में काफी लोकप्रिय हुआ। इसने सभी प्रकार के अन्याय-अत्याचारों के विरुद्ध सशक्त ढंग से आवाज उठायी। देश के गरीबों, शोषितों की आवाज को प्रताप असरदार ढंग से पेश करता था। देशी राज्यों में होने वाले जन-विरोधी कार्यों, शोषण का पर्दाफाश करने व उसका सशक्त ढंग से विरोध करने में प्रताप अग्रणी रहा।

'प्रताप' के प्रकाशन में कई तरह की कठिनाइयां आयीं। कई बार उस पर मानहानि के दावे हुए, कई मुकदमों में इस पत्र को फंसाया गया, कई आर्थिक दिक्कतें आयीं, कुछ मित्रों ने 'प्रताप' का साथ छोड़ा, स्वयं गणेश शंकर विद्यार्थी व उनके मित्रों को कई मुकदमें व जेल की सजाएं भुगतनी पड़ीं। 1928 में *श्री बनारसीदास चतुर्वेदी* को लिखे एक पत्र में विद्यार्थीजी की पीड़ा व्यक्त हुई 'ऐसा मालूम पड़ रहा है कि अब आगे से ऐसे कंगलेपन से पत्र न निकाले जा सकेंगे जैसे कंगलेपन से 'प्रताप' का जन्म हुआ था। कुछ समय ही बदला-सा मालूम होता है। अब आदर्शवादी पत्र शायद ही सफल हों। शायद उनके लिए अब समय ही न रहा हो।' दैनिक रूप से इसका प्रकाशन नवंबर 1920 से शुरू हुआ पर बीच-बीच में दैनिक 'प्रताप' बंद होता रहा।

उन्होंने साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीयता की भावनाओं की अभिव्यक्ति को विशेष प्रोत्साहन दिया। साहित्यिक भाषा पर भी विद्यार्थी जी की अच्छी पकड़ थी। 1930 में उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन का प्रेसिडेंट नियुक्त किया गया।

गणेश शंकर विद्यार्थी ने राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भागीदारी निभायी। विशेषतौर पर, उन्होंने कानपुर व उसके आसपास के क्षेत्रों में कांग्रेस के नेतृत्व में चलने वाले राष्ट्रीय आंदोलन में एक अहम् नेतृत्वकारी भूमिका निभायी। उन्होंने 1925-26 में यू. पी. लेजिसलेटिव काउंसिल के चुनावों में भी भाग लिया व जीते। 1929 में वह यू. पी. कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष बनाये गये। नागरिक अवज्ञा आंदोलन में भी उनकी जुझारू भूमिका रही। राष्ट्रीय आंदोलन में अपनी भागीदारी ओर 'प्रताप' में हर किस्म के शोषण-अन्याय के विरुद्ध लेखन व प्रकाशन के लिए उन्हें पांच बार जेल भी जाना पड़ा।

क्रांतिकारियों से विद्यार्थी जी का विशेष लगाव रहा। भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद, अशफाक-उल्लाह, राम प्रसाद बिस्मिल आदि कई क्रांतिकारी युवाओं को विद्यार्थी जी यथासंभव हर प्रकार की सहायता, सहयोग, सलाह-मशविरा देते रहते थे। अपनी लेखनी के माध्यम से वे इन क्रांतिवीरों की आवाज जनता तक पहुंचाते, उनकी देशभक्ति को जनता की निगाहों में उचित सम्मान दिलवाने का भी प्रयत्न करते।

कांग्रेस के एक प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन में दिये गये भाषण के कारण 25 मई 1930 को उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था और 9 मार्च 1931 को वे जेल से बाहर आये थे। 23 मार्च 1931 को देशभक्त क्रांतिकारी भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फांसी दे दी गयी। इससे रुष्ट जनता के भड़क उठने की कानपुर में काफी संभावना थी। अंग्रेजों ने तुरंत ऐसी चाल चली कि यह रोष उन पर न फूट कर साम्प्रदायिक दंगों का रूप ले ले। हुआ यही और कानपुर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे भड़क उठे। गणेश शंकर विद्यार्थी व उनके साथी अपनी जान की परवाह न करते हुए दंगों को रोकने तथा दंगों में फंसे लोगों को सुरक्षित स्थानों तक पहुंचाने में लगे रहे। इन्हीं प्रयासों में विद्यार्थीजी मात्र 41 वर्ष की आयु में शहीद हो गये।

रघुवीर सहाय के शब्दों में—*''गणेश शंकर विद्यार्थी हमारा अतीत नहीं हैं, वर्तमान हैं, जिसमें उन्हीं मूल्यों और मानव संबंधों के लिए संघर्ष जारी है जो हमने बीसवीं शताब्दी में स्वाधीनता संग्राम के अंतर्गत किया था।''* वास्तव में गणेश शंकर विद्यार्थी जी का जीवन-संदेश आगे आने वाली समस्त पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का बेमिसाल स्रोत रहेगा।

गणेश शंकर विद्यार्थी की शहादत (मृत्यु) के पश्चात् *महात्मा गांधी* ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में उनको श्रद्धांजलि देते हुए कहा था कि *''मुझे यह जानकर अत्यन्त शोक हुआ कि गणेश शंकर विद्यार्थी अब हमारे बीच नहीं हैं। उनके जैसे राष्ट्रभक्त और स्वार्थहीन व्यक्ति की मृत्यु पर किस संवेदनशील व्यक्ति को कष्ट नहीं होगा।''* कलम का सिपाही असमय ही चला गया लेकिन उनकी प्रेरणाएं पत्रकारिता जगत और समस्त देश को सदैव प्रेरित करती रहेंगी। ❑

विशेष छूट की घोषणा

चम्पारण सत्याग्रह शताब्दी वर्ष के अवसर पर सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी ने *डॉ. राजेन्द्र प्रसाद,* द्वारा लिखित *'चम्पारण में महात्मा गांधी' (मूल्य 550/-)* पुस्तक का प्रकाशन किया है। इस पुस्तक पर पहले से ही 40 प्रतिशत तक की रियायात दी जा रही थी। सर्व सेवा संघ प्रकाशन शताब्दी वर्ष के अवसर पर 10 प्रतिशत विशेष छूट देने का तय किया है। अर्थात् अब इस पुस्तक पर 40+10 यानी कुल 50 प्रतिशत (डाक-खर्च अतिरिक्त) छूट मिलेगी। सुधी पाठकों से निवेदन है कि इस घोषणा का लाभ उठाते हुए इस पुस्तक का अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार करें।

–अरविन्द अंजुम
संयोजक, सर्व सेवा संघ प्रकाशन

मीडिया

वक्त बहुत कम है, रफ्तार बहुत तेज

❑ रवीश कुमार

'श्रमिक-दिवस' पर स्वतंत्रता सेनानी एवं शहीदी पत्रकार गणेश शंकर विद्यार्थी को विनम्र श्रद्धांजलि!

पूंजीवाद का अजगर मीडिया और पत्रकारिता, जिसे लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ माना गया है, को निगलने पर है। पूंजीवाद का जहर मीडिया के सर पर इस कदर चढ़ रहा है कि उसे वह अनाप-सनाप कुछ भी बोलने और लिखने को मजबूर कर रहा है। पत्रकारिता की यह हालत इसलिए भी हुई है कि आज पत्रकार अपने को श्रमिक या कामगार और लोकतंत्र की रक्षा के लिए कलम का सिपाही नहीं, अपने को एक गैर जिम्मेदार लाटसाहब बना लिया है। प्रस्तुत है आज के जाने-माने टिप्पणीकार व पत्रकार रवीश कुमार का वक्तव्य, जो उन्होंने 19 मार्च 2017 की शाम इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित 'प्रथम कुलदीप नैय्यर पत्रकारिता सम्मान' समारोह में दिया था। **–सं.**

पूरी दुनिया में जिस राजनीतिक समय को निरादर के साथ देखा जा रहा हो, उसी वक्त में खुद को सम्मानित होते देखना उस घड़ी को देखना है, जो अभी भी टिक-टिक करती है। दशकों पहले दीवारों पर टिक-टिक करने वाली घड़ियां खामोश हो गयीं। हमने आहट से वक्त को पहचानना छोड़ दिया। इसलिए पता नहीं चलता कि कब कौन-सा वक्त बगल में आकर बैठ गया है। हम सबको इम्तहान के एक ऐसे कमरे में बिठा दिया गया है, जहां उड़नदस्तों की टोली धावा बोलती रहती है। यह अहसास कराने के लिए कि हमारे बीच कोई तो चोर होगा, कभी तो कोई चोरी करते पकड़ा जायेगा, बार-बार जेबों की तलाशी ली जा रही है। चुपचाप अपने हिसाब से लिखने-बोलने वालों के पीछे उड़नदस्ते छोड़ दिये गये हैं। जब भी कोई उड़नदस्ता आता है, कमरे में नये सिरे से फिर वही दहशत फैल जाती है। कहीं चोरी न करने पर भी चोरी के जुर्म में कोई पकड़ तो नहीं लेगा। इन उड़नदस्तों ने जितना चोरों को नहीं पकड़ा, उससे कहीं ज्यादा चोरी न करने वालों को डरा दिया है। असली डिग्री बनाम फर्जी डिग्री के इस दौर में थर्ड डिग्री नये-नये रूपों में वापस आ गयी है। हमारे समय का थानेदार है न्यूज एंकर। वो हर दिन हाजत में ऐसे लोगों की धुलाई करता है, जो उसके हुजूर से अलग बोलते हैं। इस हाजत में विपक्ष होना अपराध है। विकल्प होना घोर अपराध है। तथ्य होना दुराचार है। सत्य होना पाप है। टीवी ने पहले हमारी शाम को लॉकअप में बदला, अब तो दिन भर थाने चालू रहते हैं। आप सबने पहले पुरस्कार के लिए न्यूज एंकर को चुना है, इससे पता चलता है कि दुनिया में अब भी ऐसे लोग बचे हुए हैं, जो एक और हार के लिए खतरे उठा सकते हैं। उनका बचा रहना एक भ्रम भी हो सकता है। फिर भी मैं अभी सभी का आभारी हूं।

शुक्रिया गांधी शांति प्रतिष्ठान का! इस पुरस्कार में पत्रकारों का पसीना है। अपने पेशे के बड़ों से कुछ भी मिल जाये वो बख्शीश के समान है। समझिये दुआ कबूल हुई है। हम सब *कुलदीप नैयर साहब* का आदर करते रहे हैं। करोड़ों लोगों ने आपको पढ़ा है। आपने उस सीमा पर जाकर मोमबत्तियां जलायी हैं, जिसके नाम पर इन दिनों रोज नफरत की नयी-नयी अफवाहें फैलायी जा रही हैं। *मोहब्बत की बात ही कितने लोग करते हैं, मुझे तो शक है इस जमाने में लोग मोहब्बत भी करते हैं। हम कभी सुबह उठकर सूरज नहीं देखते हैं। 'व्हाट्स अप' खोल कर भेजे गये गुडमॉर्निंग मैसेज देखते हैं। जल्दी ही कुछ दिनों में दुनिया मान लेगी कि सूरज व्हाट्स अप में उगता है। हम जल्दी ही गैलीलियो को फिर से घेरने वाले हैं। इस बार आप उसका सीधा प्रसारण देखेंगे।*

अनुपम मिश्र हमारे बीच नहीं हैं। हमने इस सच का सामना वैसे ही कर लिया है, जैसे इस समाज ने उनके नहीं होने का सामना उनके रहते ही कर लिया था। काश यह पुरस्कार मैं उनके सामने लेता, शायद उनके हाथों से! जब भी कहीं कोई साफ हवा शरीर को छूती है, कहीं पानी की लहर दिखती है, मुझे अनुपम मिश्र की याद आ जाती है। वो हमारे लिए एक ऐसी भाषा बचा कर गये हैं, जिसके सहारे हम बहुत कुछ बचा सकते हैं। उसके लिए जरूरी है कि हम फिर से खुद को साफ करें। हमारे अंदर की निर्मलता कई तरह की मलिनताओं से दब गयी है। अनुपम मिश्र की तरह भाषा और विचारों को थोड़ा संपादित करना चाहिए। अपने ऊपर जमी धूल की परतों को झाड़े बिना हम फिर से खड़े नहीं हो पायेंगे।

यह दौर संभावनाएं ढूंढ़ने का है। हम हर समय इस तलाश में हैं कि कहां-कहां संभावनाएं बची हुई हैं और कौन-कौन हैं, जो इन बची हुई संभावनाओं को बचाए हुए हैं। ऐसे लोगों के भीतर की संभावनाएं अब कातर

लगने लगी हैं। हम सबकी संभावनाएं अकेली पड़ती जा रही हैं। *हम कब तक बचे हुए हैं, इसकी चिन्ता सता रही है। जब तक बचे हुए हैं उसे जी लेने का स्वाद भूल गये हैं। जोश और जुनून फिर से पैदा करने की जरूरत है। सवालों को धार दीजिए, उनसे पूछिए जिनके भरोसे हम अपनी दुनिया में रमे हुए थे। उन दलों ने हमें धोखा दिया है।* उनसे भी पूछिए जिनका कोई भरोसा नहीं है। हमारे समाज से संवाद समाप्त हो गया है। समाज बदलाव के लिए राजनीतिक दल को ही पहचानता है। उसे पता है कि सत्ता जिसके पास है, समाज को बदलने का खतरनाक या सुंदर खेल वही कर सकता है। इसलिए *जनता राजनीतिक दलों के साथ बड़ा जोखिम लेती है। वो लगातार जोखिम उठाती रही है। हर बार हारती है मगर अगली बार भी किसी बड़े राजनीतिक दल पर दांव लगाती है।*

बीते दशकों में राजनीतिक दलों को छोड़कर या किनारा कर अलग-अलग दिशाओं में काम करने वाले लोगों के बाहर आ जाने से राजनीति का ज्यादा पतन हुआ है। उन्हें लगा कि समाज राजनीति से नहीं बदलेगा। राजनीतिक दलों में ऐसे लोगों के न रहने से राजनीति का नैतिक बल गिरा है। राजनीतिक दलों में फिर से प्रवेश का आंदोलन होना चाहिए। अपने अंतर्विरोधों को छोड़ दीजिए। पिछले तीस-चालीस सालों से उन्हें बहुत देखा है। वामपंथी हो, गांधीवादी हों, अम्बेडकरवादी हों या समाजवादी, हर धाराओं से लोगों ने मूल दल को छोड़ दिया। उन लोगों के निकल आने से मुख्य धारा की राजनीति में वैकल्पिक राजनीति कमजोर हुई है। फिर से उन दलों की तरफ लौटिए और संगठन पर कब्जा कीजिए। पुरानी बातों को भूल जाइये। नई बातों के लिए प्रयास कीजिए। आप सब एक ऐसे मानव संसाधन हैं, जिनमें अब भी राजनीति को बेहतर बनाने की संभावनाएं हैं। आप सबकी बहुत जरूरत है। अपनी कातरता और कायरता को समझने का यह बहुत ही उम्दा वक्त है। जब वक्त बहुत क्रूर हो चला है, उसी वक्त में अपनी समीक्षा बेहद क्रूरता और ईमानदारी से करनी चाहिए।

पत्रकारिता के लिए पुरस्कार मिल रहा है। मुझे यह बताते हुए बेहद खुशी हो रही है कि आज पत्रकारिता में कोई संकट नहीं है। राजधानी से लेकर जिला संस्करणों के संपादक दल विशेष की वैचारिक आंधी में बहकर बेहद खुश हैं। हम उन्हें चाहे जितना खराब कह लें मगर हमें यह समझना होगा कि वे बेहद खुश हैं। पत्रकार होने की सार्थकता से अब जाकर उनका साक्षात्कार हो रहा है। पचास-साठ सालों से पत्रकारिता संस्थान सत्ता में विलीन होने के लिए प्रयासरत थे। होटल, मॉल, खनन और तमाम तरह के लाइसेंस लेने के बाद भी उनका जी नहीं भर पा रहा था। उनकी प्यासी आत्मा तड़पती रही। अब जाकर मीडिया को करार आया है। सत्ता में विलय की उसकी इच्छा पूरी हुई है।

भारत की पत्रकारिता या पत्रकारिता संस्थान इस वक्त अपनी प्रसन्नता के स्वर्णकाल में पहुंच गये हैं। कभी वे स्वर्ग की सीढ़ी खोज लाये लेकिन अब उन्हें इसी धरती पर स्वर्ग मिल गया है। सीढ़ी की जरूरत नहीं रही। सत्ता ही स्वर्ग है। आपको यकीन न हो तो कोई भी अखबार या कोई भी न्यूज चैनल देख लीजिए। किसी एक राजनीतिक एजेंडे के प्रति स्नेह और यकीन देखकर आपका मन गद्‌गद हो जायेगा। दशकों से निराशा से गुजर रहे ऐसे पत्रकारों की खुशी को समझेंगे तभी आपको अपनी तकलीफ कम नजर आयेगी। सूटेड-बूटेड एंकर अपनी आजादी गंवाकर इतने हैंडसम कभी नहीं लगे। एंकराएं सरकार की तरफदारी में इतनी हसीन कभी नहीं लगीं। पत्रकार भी सरकार हैं।

अगर आपको लड़ना है तो अखबार और टीवी से लड़ने की सोचिये। पत्रकारिता को बचाने के मोह में फंसे रहने की जिद छोड़ दीजिए। पत्रकार ही नहीं बचना चाहता है। जो थोड़े-बहुत बचे हुए हैं उन्हें बेदखल करना बहुत आसान है। व्यक्तिगत रूप से पत्रकार के बचे रहने से क्या होगा? संस्थानों का सांप्रदायीकरण हो चुका है। भारत की पत्रकारिता सांप्रदायिकता फैला रही हैं। उसे रक्त चाहिए। वो एक दिन खून बहा देगी। आज उसकी कोशिशें बहुत कामयाब नहीं हो पा रही हैं मगर देखिए तो सही कि पत्रकारिता कितनी कोशिश कर रही है। इसलिए समाज को राह चलते हुए बताइये कि इसके क्या खतरे हैं। न्यूज चैनल और अखबार राजनीतिक दल की नई शाखाएं हैं। एंकर किसी राजनीतिक दल में उसके महासचिव से ज्यादा प्रभावशाली है। जब तक कोई इन नये राजनीतिक दलों से नहीं लड़ेगा, वो राजनीतिक विकल्प नहीं रच पायेगा। जनता की भी ऐसी ट्रेनिंग हो गयी है कि कई लोग कहने आ जाते हैं कि आप सवाल क्यों करते हैं। स्याही फेंकने वाले प्रवक्ता बन रहे हैं और स्याही से लिखने वाले प्रोपेगैंडा कर रहे हैं। पत्रकारिता का वर्तमान प्रोपेगैंडा का वर्तमान है।

इसी वर्तमान में उन पत्रकारों को हम कैसे भूल सकते हैं, जो संभावनाओं को बचाने में लगे हैं। भले ही उनकी संभावनाएं समाप्त हो जायेंगी लेकिन आने वाले वक्त में दूसरों के लिए बड़ा उपकार करेंगे। *जब भी सत्ता की चाटुकारिता से ऊबे हुए या धोखा खाए पत्रकारों की नींद टूटेगी, ऐसे पत्रकारों की बचायी हुई संभावनाएं ही उनका सहारा बनेंगी। इसलिए जितना हो सके, अपनी संभावनाओं को बचा कर रखिये।* अपने समय को उम्मीद और हताशा के चश्मे से मत देखिये। हम उस पटरी पर हैं जिस पर रेलगाड़ी का इंजन बिलकुल सामने है। भागने या बचने का कोई रास्ता नहीं है। उम्मीद और हताशा, दोनों किसी काम की नहीं है। खुद को काम में झोंक देने का समय है। वक्त कम है और उसकी रफ्तार बहुत तेज है। ❑

1 मई : श्रमिक-दिवस

मेरी पांती : किसान-मजदूर भाई-बहनों के नाम

अब किसान, मजदूर बनेगा

❑ डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा

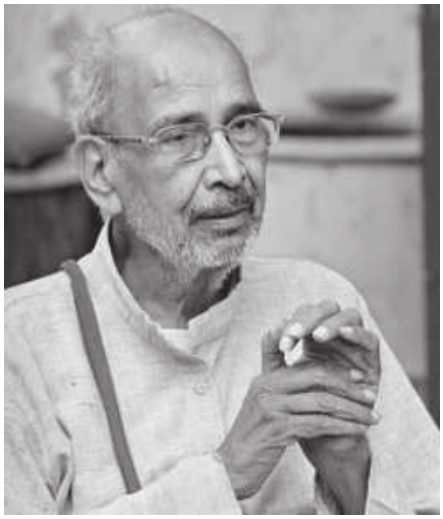

डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा का नाम आधुनिक भारत में जन आंदोलन के एक संस्थापक के रूप में सदा स्मरणीय रहेगा। आप प्रशासन के शिखर (भारतीय प्रशासनिक सेवा) पर रहकर भी गांधी के सपनों को साकार करने के लिए प्रशासन को छोड़कर व्यवस्था की प्रताड़ना सहने वाले अकेले व्यक्ति रहे। अंतिम व्यक्ति के हक की लड़ाई में आपने अपना जीवन होम कर दिया। हम बड़े खुशनसीब हैं कि उनके साथ काम करने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

उनकी यह पांती, जो देश के मजदूर-किसान भाई-बहनों के नाम है, श्रमिक दिवस के इस अवसर पर स्मरणांजलि के रूप में अविकल प्रस्तुत है।

इस महान् आत्मा को नमन और विनम्र श्रद्धांजलि। **- सं.**

यह पांती हमने अपने गांव के भाई-बहनों और बेटे-बेटियों के लिए लिखी है। सो आप खुद पढ़ सकें तो अच्छा है। नहीं तो किसी से पढ़वा कर सुन लें। हमारी बात जंचे तो पन्द्रह पैसे का पोस्टकार्ड जरूर लिख दें (नहीं लिख पायें तो किसी से लिखवा दें)। कोई बात नहीं जंचे तो गलती बता दें। घर की बात है भूल सुधार कर लेंगे। बहरहाल हमारी बात पर गौर करके लिखना जरूर, भूल मत जाना।

भइयाजी, हमारी तो सीधी-सच्ची सौ बात की एक बात है। कोई लाग-लपेट नहीं है। दुनिया पलती है किसान-मजदूर की कमाई पर। वह किसी का मोहताज नहीं है। मगर आज छल-फरेब की दुनिया ने उसे भिखारी बना दिया है, कहीं का नहीं रखा है। हम यह छल-फरेब अब नहीं चलने देंगे। इसी छल-फरेब की कहानी इस पांती में है। उत्तम खेती वाले किसान-मजदूरों के इस देश में खेती ही उत्तम रहेगी। किसान-मजदूर के अव्वल नंबर पर पहुंचा कर ही हम दम लेंगे।

इस पांती में दो-तीन खास बातें हैं। पहली तो यही है कि हमारे देश में आज किसान की कोई इज्जत ही नहीं है। हर बात में वह शहरुओं और उनकी सरकार का मोहताज है। सच तो यह है कि मुल्क आजाद जरूर हो गया मगर आजादी गांव तक पहुंची ही नहीं। अपना जता कर नेता-अफसर ने हमारी हालत गुलामी से भी बदतर कर दी है। अब यही देखो सरकार और शहरुआ डंका पीटते रहते हैं कि गांव और गरीब का और दीवाली जगमगा रही है शहर बाजार में। विकास, अनुदान, राहत सब झूठ है। मगर अंदर-अंदर सरकार ऐसी घूस का मार मार रही है कि हमारी कमर ही टूट गयी, आज बैसाखियों का सहारा ले कर चलने की मजबूरी है।

अब यही देखो, आजादी के समय शहर और गांव के लोगों की औसत आमदनी में ड्योढ़े का अंतर था। आज यह अंतर दस गुना हो गया है। हमारी कच्ची बखारी भी टूट रही है और शहरों में अटारी पर अटारी अटीं हैं। लूट मची है मगर हमारे भोलाराम जी को कोई खबर ही नहीं। सरकार दिन-रात खेत में खटने वाले किसान की मेहनत का मोल आंकती है दस रुपये रोज। और दिनभर चाय की चुस्की चलाने वाला चपरासी पाये 50 रुपये, करखनिया मजदूर 100 रुपये, साहब 500 रुपये। क्या तमाशा है यह? आखिर किसानी का काम किस तरह अकुशल है? किसानी के काम की हकदारी 100 रुपये रोज से ज्यादा न मानकर 10 रुपये रोज मानने का एक ही मतलब है—किसान-मजदूर के हाथ में उनकी हकदारी न पहुंचने देने की साजिश और उसमें 90 रुपये की कटौती। यही है घूस का मार, घूस का टैक्स और खूली जिस पर शहरुआ और सरकार रंगरेलियां मना रहे हैं।

वैसे तो किसान-मजदूर की बरबादी पूरे देश में ही है मगर उत्तर भारत के गंगा के मैदान की बात कुछ निराली है। पहाड़, जंगल, पठार के इलाकों में खेती की लूट हुई तो दूसरे रूप में कुछ मिल भी गया। मगर पांच हजार साल से जिस मैदान में धरती की गंध वाली सभ्यता जनमी और फली-फूली, आजादी के बाद उसकी ऐसी लूट हुई जिसका कोई हिसाब नहीं। यहां के नवाबजादे नेता-अफसरों को लूट का ध्यान तक नहीं, करोड़ों किसान मजदूरों को दस रुपये रोज की हकदारी और लगे हैं सोने उगलने वाली धरती पर पत्थर से ताबूत लगाने में। आज देश की सालाना सकल आमदनी पांच लाख करोड़ रुपया है। इस मैदान से, जिसका मजाक बनाकर 'काऊबेल्ट' या 'गायधार' कहा जाता है, लगभग 50 हजार करोड़ रुपये की लूट सालाना होती है इस घूस का टैक्स के जरिये। पूरे देश में किसान-मजदूर पर लगभग एक-डेढ़ लाख करोड़ रुपये की घूस का टैक्स की मार पड़ी है। आजादी के समय अव्वल नंबर का गायधार अगर आज फसड्डी है तो उसमें अचरज कैसा?

सो भइयाजी, आज हमारा आपसे सीधा

सवाल है—क्या आपको यह गुलामी, यह बेइज्जती मंजूर है? बात रोटी की भी है मगर असली सवाल इज्जत का है। गांव के युवकों खासतौर से गायधार के युवकों से हमें पूछना है—हम लोगों की दुखम-सुखम जैसी थी वैसी बीत गयी। तुम्हारे सामने तो अभी पूरी जिन्दगी है—कौन-सा सपना संजोया है अपने भविष्य के लिए?

खेती घाटे का सौदा है। *धरती माता को बाजार में बोली पर चढ़ा दिया है। सो यही चलन रहे तो किसान के पास धरती नहीं रहेगी। रह जायेगा वह खाली हाथ बेचने के लिए अपना जिस्म खुले बाजार में...वहां सबका इंतजाम कर दिया है सरकार ने। पसुआ रिक्शा चलायेगा, परसू कपड़े धोयेगे और परशुरामजी सिर पर कलगी हाथ में पचफैरा, ठोकेंगेसलाम अमीरजादों की दुनिया में। जिनको यह कुछ नसीब न हो तो बिठा दें अपनी बहनिया को बाजार में...सब कुछ बिकाऊ है वहां। यही है पांचसितारा संस्कृति...खेती उद्योग है, किसान मजदूर बनेगा।* पर्यटन उद्योग है सो काम करें बेटा और बेटी बेरा और बेरिन बनकर! इसमें शरम और हया की बात क्या है...तरक्की और विकास!!

बताओ, सीधा जवाब दो...है यह जिन्दगी मंजूर तुम्हें? पढ़े-लिखों के सामने दो रास्ते हैं—पहला न्याय-अन्याय की यहां कही बातें भूल जाओ...कहीं मन में कचोट न लगे...और पहुंच जाओ किसी तरह शहरुओं की जमात में...साहब, बाबू, दलाल या चपरासी ही बनकर। शामिल हो जाओ उस लूट में ईमानदारी से विकास और तरक्की की कसमें खाकर...और अपनों की शकल में जी भर कर लूटो। जो नहीं पहुंच पायें शहर वे बन जायें शहरुओं के लंगू-झंगू...नेता साहब के इर्दगिर्द घूमो। उनके चले जाने के बाद मारते रहो डींगे, फांकते रहो उनकी अदा और शान को। यह भी न हो पाये तो ऐंठो बाप से पैसे और खो जाओ ठर्रे और हेरोइन की दुनिया में। मतलब सबका एक—उस पांच सितारों वाली शहरी दुनिया के इर्द-गिर्द मंडराते रहो और जहां भी दिखे किसी महाभोज की जूठी पत्तल, तो मार दो झपट्टा आंखें बंद करके, बस! यही कहानी है आज गांव और कस्वाई युवकों की...बात कड़ुई है, पर सच्चाई कड़ुई होती है!

मगर एक दूसरा रास्ता भी है...खुद्दारी का, आत्म-सम्मान का। ललकार दो उन लुटेरों को...कह दो हमें अब असलियत का अहसास हो गया है...अब यह लूट नहीं चलेगी। मगर वे दरिन्दे सिर्फ बात से नहीं मानेंगे। सो बांध लो कफन अपने सिर पर, कसम खाओ अपनी इज्जत और अरमानों की...सूखी रोटी मंजूर है इज्जत से जिन्दगी जियेंगे। न खुद अन्याय सहेंगे और न दूसरों पर होने देंगे।

अस्वीकार कर दो इस पूरी अन्यायी व्यवस्था को, संभाल लो कमान किसान-मजदूर की न्याय के लिए लड़ाई की, किसान-मजदूरों के साथ उन्हीं की जिन्दगी में रम कर...

सो बताओ, मन को टटोलो इसी क्षण क्या मंजूर है...जूठन की मेवा मिठाई या घर के रूखे-सूखे टिक्कर...रूखे-सूखे टिक्कर खा कर आधे पेट रहकर अन्याय के खिलाफ बगावत का अरमान है तो रख दो यह पांती एक तरफ पढ़कर...बहुत पढ़ लिया... और निकल पड़ो...तुरंत बिना पीछे निहारे...बिना आगा-पीछा सोचे...एक लक्ष्य अर्जुन की तरह अन्याय के खिलाफ बगावत...यही तरुणाई का तकाजा है, यही तरुणाई की शान है!

लिख दी हमने यह पांती हो सभी संगी-साथियों की ओर से, जूझने वाले अन्याय के खिलाफ यहां गांव मावलीभाटा, पोस्ट डिलमिली, जिला बस्तर, मध्य प्रदेश से आज अगस्त क्रांति के दिन 9 अगस्त 1993 सोमवार ब्रह्मदेव शर्मा ने आपको, आपके साथियों को क्रांतिकारी अभिवादन के साथ। *('किसान की ललकार' पुस्तक से 'अपनी बात')*

सर्वोदय की परिभाषा

निरंतर प्रगति के लिए अवसर रहे, इसलिए आदर्श की ऊंचाई होती है। मनुष्य का आदर्श इतना ऊंचा हो कि उसका सारा जीवन प्रगतिमय ही रहे। गांधी से किसी ने पूछा कि 'तुम्हारी अहिंसा की परिभाषा क्या है?' गांधी बेचारा तो शब्दों के और परिभाषाओं का स्वामी था नहीं। उसने परिभाषा तो नहीं की, पर तुलना की—यूक्लिड के 'बिन्दु' से। बिन्दु के 'स्थिति' है, पर 'लंबाई-चौड़ाई' नहीं है। परिभाषा के अनुसार बिन्दु तो नहीं बनाया जा सकता। पर परिभाषा के बिना बिन्दु ही नहीं बन सकता। इसको जरा समझने की कोशिश करें।

मान लीजिए कि एक लड़के से कहा कि 'कम-से-कम लंबाई-चौड़ाई वाला बिन्दु बनाओ', तो उसने खड़िया से बनाया। मास्टर ने कहा कि 'ऐसा कैसा बनाया? इसे तो लंबाई-चौड़ाई है।' तब मास्टर ने डंडे से बनाया। लड़के ने कहा, 'इससे तो मेरा ही सही था।' तो मास्टर ने कहा, 'अरे, देखता नहीं है? मेरे हाथ में डंडा है, फिर भी कहता है?' किसी ने कहा, 'मेरी पेंसिल खड़िया से बारीक है', तो किसी ने कहा कि 'सूई से बनायें।' फिर भी लंबाई-चौड़ाई तो रही! जिसकी जैसी भूमिका होगी, जिसका जैसा उपकरण होगा, वैसा उसका बिन्दु बनेगा। इसलिए परिभाषा में तो पूरा ही कह देना चाहिए, कम-से-कम नहीं, अधूरा नहीं। सर्वोदय का संकल्प अल्प नहीं है, महान् है। केवल महान् ही नहीं है, समग्र है।

*'जितना जीवन है, वह सारा-का-सारा ईश्वर से भरा हुआ है'—**'ईशावास्यमिदं सर्वम्।'** इसलिए संपूर्ण जीवन सम्पन्न करना हमारा मुख्य काम होगा। आदर्श 'अप्राप्य' नहीं है, 'अप्राप्त' है। अप्राप्त क्यों? क्योंकि निरंतर प्रगति होती है। वह इतना व्यापक है कि सबके लिए समान रूप से लागू होता है।*

–दादा धर्माधिकारी

राष्ट्रों को श्रीहीन करती बहुराष्ट्रीय कंपनियां और कारपोरेट

❑ निका नाइट

कारपोरेट (बहुराष्ट्रीय निगमों) की बढ़ती ताकत और आकार राष्ट्रों को अर्थहीन बनाते जा रहे हैं। यदि समय रहते इन पर लगाम न लगायी गयी तो यह राष्ट्रों की सम्प्रभुता को नष्ट कर देंगे एवं एक बार पुनः दुनिया पर ईस्ट इंडिया कम्पनी जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का राज हो जायेगा। **–सं.**

ब्रिटेन स्थित 'ग्लोबल जस्टिस नाऊ' द्वारा जारी किये गये नये आंकड़ों के अनुसार कारपोरेशन (निगम) ही इस दुनिया को चला रहे हैं। इस आर्थिक एवं सामाजिक न्याय पैरवी समूह ने पाया कि सबसे बड़े 10 (दस) कारपोरेशन विश्व के अधिकांश देशों को यदि एक साथ मिला दिया जाये तो उनसे भी ज्यादा समृद्ध हैं। ग्लोबल जस्टिस नाऊ आंदोलन की नीति अधिकारी, आएशा डोडवेल ने लिखा है, ''यदि आज दुनिया की सबसे समृद्ध 100 आर्थिक इकाइयों का मूल्यांकन करेंगे तो हम पायेंगे कि अब उनमें से 69 बड़े कारपोरेशन हैं और महज 31 देश हैं। पिछले साल यह अनुपात 67 : 37 था। अगर यह अंतर इसी रफ्तार से बढ़ता रहा तो एक पीढ़ी (करीब 30 वर्ष) के अंदर इस पूरी दुनिया पर इन विशाल कारपोरेशनों का पूरा आधिपत्य हो जायेगा। वस्तुतः शैल, एप्पल और वालमार्ट जैसी महाकाय बहुराष्ट्रीय कंपनियों में से प्रत्येक का राजस्व विश्व के 180 'निर्धनतम' देशों से अधिक है। इन देशों में संयुक्त रूप से आयरलैंड, ग्रीस, दक्षिण अफ्रीका और कोलंबिया शामिल हैं। इन दस सर्वोच्च कंपनियों का संयुक्त मूल्य 2.9 अरब डॉलर है जो कि चीन की अर्थव्यवस्था से भी ज्यादा है। वालमार्ट जो कि विश्व का सबसे बड़ा कारपोरेट है की कुल कीमत 482 अरब डॉलर है जो कि इसे स्पेन, आस्ट्रेलिया व नीदरलैंड (अलग-अलग) से अधिक अमीर बना देती है।

ग्लोबल जस्टिस नाऊ के निदेशक निक डियरडेन का कहना है, कारपोरेशन निगमों की अथाह संपदा और ताकत ही विश्व की अनेक समस्याओं की जड़ में है। अल्पावधि की लाभ की आकांक्षा इस ग्रह पर निवास कर रहे करोड़ों लोगों के मानवाधिकार से खिलवाड़ कर रही है। आंकड़े बता रहे हैं कि स्थितियां दिनोंदिन बदतर होती जा रही हैं। हमें इस बात को लेकर चिन्तित होना चाहिए कि बहुराष्ट्रीय कंपनियां उन क्षेत्रों में भी अत्यधिक प्रभुत्व जताती जा रही हैं, जिन्हें कि पारम्परिक तौर पर राज्य का प्राथमिक क्षेत्र माना जाता था। *एक ओर वे शिक्षा से स्वास्थ्य तक और सीमाओं के नियंत्रण से लेकर जेलखानों तक का निजीकरण कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर अपने लाभ को आफशोर (बाहरी देशों) गुप्त खातों में जमा करते जा रहे हैं। इतना ही नहीं निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी असाधारण पहुंच बन गयी है और वे गुप्त न्यायालय बनाकर उस पूरी न्याय प्रक्रिया की अनदेखी कर रहे हैं, जो कि सामान्य लोगों पर लागू है। ऐसा करते हुए वे लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को भी ठेंगा दिखा रहे हैं।* उनकी इस असाधारण वृद्धि के परिणामस्वरूप पर्यावरण विध्वंस हो रहा है और जलवायु परिवर्तन सामने आ रहा है। किसी कारखाने में गुलामों जैसी कार्य परिस्थितियां से लेकर बी पी. (ब्रिटिश पेट्रोलियम) के तेल कुओं में रिसाव से लोगों के घर की बर्बादी,जैसी कारपोरेशनों की मनमानियों की तमाम कहानियां हम अक्सर दैनिक समाचार-पत्रों में पढ़ते हैं।

ग्लोबल जस्टिस नऊ का कहना है, ''इस समय इन आंकड़ों को इसलिए जारी किया गया है, जिससे ब्रिटिश सरकार पर दबाव डाला जा सके कि इक्वाडोर की अध्यक्षता में गठित सं रा. कार्यसमूह द्वारा प्रस्तावित रिपोर्ट में वह इस तरह की बाध्यकारी संधि की स्थापना हेतु दबाव डाले, जिससे कि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह बहुराष्ट्रीय कारपोरेशन इस संधि से बाध्य होकर मानव अधिकारों की पूरी जवाबदेही को स्वीकारें। वैसे ब्रिटेन ने कभी भी इस प्रक्रिया का समर्थन नहीं किया है और पूर्व में बार-बार इस प्रस्ताव पर वीटो करता रहा है और इस प्रस्ताव का विरोध भी किया है। *डीयरडेन* का कहना है, *'ब्रिटिश सरकार ने करों के ढांचे, व्यापार समझौतों और बड़े व्यापारियों की मदद हेतु कार्यक्रमों के माध्यम से कारपोरेशन की ताकत बढ़ाने में मदद ही की है। अमेरिका-यूरोप ट्रांसअटलांटिक ट्रेड एवं इन्वेस्टमेंट पार्टनरशिप (टी टी आई पी) सरकार द्वारा बड़े व्यापारों को मदद पहुंचाने का नवीनतम उदाहरण है।* इतना ही नहीं उसने बहुत ही अगरिमापूर्वक ढंग से नियमित तौर पर संयुक्त राष्ट्र संघ में विकासशील देशों के उन प्रस्तावों का विरोध किया है, जिनमें उन्होंने कारपोरेशनों द्वारा अपने यहां पर मानवाधिकारों के उल्लंघन की बात कही गयी थी।

साथ-साथ नवीनतम आंकड़ें दर्शाते हैं कि कारपोरेशनों ने किस हद तक इस पूरे विश्व में अपना प्रभुत्व कायम कर लिया है। ग्लोबल जस्टिस नाऊ ने अब एक याचिका जारी की है जिसमें ब्रिटिश सरकार से कहा गया है कि वह संयुक्त राष्ट्र संघ को एक→

1 मई, श्रमिक दिवस : श्रम-शक्ति

वैकल्पिक रास्तों की खोज

❑ **बाबा मायाराम**

भारत में जीवनशैली और रोजगार में स्थानीयता का अत्यधिक महत्त्व रहा है। हम एक आत्मनिर्भर समाज रहे हैं। परंतु आज स्थिति एकदम बदल गयी है। आवश्यकता अपनी परम्परा को समझने और सहेजने की है। **–सं.**

जब कच्छ के नूर मोहम्मद ने जोडिया पावा पर सुरीली तान छेड़ी तो हम सब मंत्रमुग्ध हो गये। यह विकल्प संगम का मौका था जो गुजरात के भुज से कुछ दूरी पर एक निजी प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र में चल रहा था। कच्छ के अलग-अलग समुदाय यहां अपने काम व अनुभव साझा कर रहे थे और वैकल्पिक भविष्य बनाने का रास्ता खोज कर रहे थे। जोडिया पावा (दो बांसुरी) यानी जोड़ी। एक बड़ी और दूसरी छोटी। यह एक परंपरागत वाद्य यंत्र है, जिसे कच्छी लोग बजाते हैं। खासतौर पर मालधारी (पशुपालक) नूर ने बताया कि इसे लोग बजाना भूल गये थे। उन्होंने रेडियो से सुनते-सुनते बजाना सीखा। लेकिन इसके बाद उन्होंने कई स्थानीय कलाकारों को बजाना सिखाया। यह कला एक-दूरे से ही सीखी जा सकती है। बुजुर्गों से युवा पीढ़ी दीक्षित होती जाती है। ज्ञान का प्रवाह होता रहता है। सैकड़ों सालों से ऐसे ही लोक परम्पराएं न केवल जीवित हैं, बल्कि लोकप्रिय भी हैं।

तीन दिवसीय विकल्प संगम में कच्छ के करीब 70-80 लोगों ने भाग लिया। इसमें कई संस्थान जैसे कि खमीर, सहजीवन, हुनर शाल, एसीटी, कच्छ महिला विकास संगठन, कच्छ नवनिर्माण अभियान, सेतु, सखी, संगिनी आदि के प्रतिनिधि शामिल हुए। इसके अलावा स्थानीय पंचायत प्रतिनिधि, मालधारी, कलाकार, बुनकर, कारीगर, लोक कलाकार आदि ने हिस्सा लिया। यहां जो भी बातें हो रही थीं हमें अतीत से वर्तमान बनाने के लिए हो रही थीं। कच्छी कला, खेती, शिक्षा, परम्परागत चिकित्सा, बुनाई, कढ़ाई, अजरक प्रिंटिंग, स्थानीय स्वशासन व विकेन्द्रीकरण और पशुपालन जैसे कई मुद्दों पर चर्चा हुई। मेरे लिए सब कुछ नया था विषय भी, भाषा भी, वेश-भूषा भी, लोग भी, इलाका भी और कच्छी व गुजराती भोजन भी। जिस निजानंद फार्म में बैठक हो रही थी वहां कई औषधि पौधे थे जो हमारी परंपरागत चिकित्सा पद्धति की याद दिलाते हैं।

विकल्प संगम के बारे में कल्पवृक्ष के संस्थापक सदस्य आशीष कोठारी बताते हैं कि संगम के पांच स्तम्भ हैं, जिन पर चलकर हम वैकल्पिक विकास की दिशा में आगे बढ़ सकते हैं। ये हैं पर्यावरण सुरक्षा, राजनैतिक लोकतंत्र, आर्थिक लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और संस्कृति और ज्ञान की विविधता। इसे विस्तार से बताते हुए वह कहते हैं कि उसमें पांच प्रमुख बातों का ध्यान रखना जरूरी है। एक, जो भी विकास हो उसमें पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों का बेतहाशा दोहन न हो, उनका नाश न हो। वे भावी पीढ़ियों के लिए भी बचे रहें। दूसरा, जो विकास हो उसमें स्थानीय लोगों की जरूरतें व उनके निर्णय की प्रक्रिया में केन्द्रीय सहभागिता यानी स्वशासन हो। लोकतांत्रिक तरीके से फैसले लिए जायें और ऊपर से न थोपे जायें।

वे गढ़चिरौली (महाराष्ट्र) के मेढालेखा गांव का उदाहरण देते हैं, जहां के लोगों ने नारा दिया—'मुम्बई-दिल्ली में हमारी सरकार, हमारे गांव में हम ही सरकार'। तीसरा, आर्थिक लोकतंत्र हो यानी स्थानीयकरण हो, भूमंडलीकरण न हो। जो भी चीजें लोग उत्पन्न करें, सबसे पहले अपनी जरूरतों के लिए और उसके बाद ज्यादा हो तो बेचने के लिए। सिर्फ बाजार के लिए ही सब कुछ उत्पन्न न करें। उत्पन्न करने के संसाधन स्वयं के हाथ में हो, न कि किसी पूंजीपति या सरकार के हाथ में यानी स्वावलंबन हो। चौथा, सामाजिक न्याय हो, शांति हो, आपस में वर्ग, जाति, नस्ल, लिंग, धर्म आदि के आधार पर भेदभाव न हो। हम समानता और बंधुत्व की ओर बढ़ सकें। पांचवां, संस्कृति और ज्ञान में विविधता हो। उनका निजीकरण न हे। वे सबके लिए सामूहिक रूप से सुलभ हों।

अब तक पांच विकल्प संगम टिम्बक टू में आंध्र प्रदेश व तेलंगाना के लिए, चेन्नई में

→ऐसी बाध्यकारी संधि को अपनाने में मदद करे जो कारपोरेशनों को इस बात के लिए बाध्य कर सके कि वे विश्वभर में मानवाधिकारों का सम्मान करें। यह संधि 12 अक्टूबर के ब्रिटेन और यूरोपीय संघ के नेताओं को सौंप दी गयी है। डोडवेल का कहना है, ''हालांकि कारपोरेट ताकत के खिलाफ लड़ाई बहुआयामी है और सं. राष्ट्र संधि उसका केवल एक हिस्सा है। ठीक इसी समय यह भी आवश्यक है कि हम अपनी आवश्यकताओं से संबंधित वस्तुओं को तैयार करने, वितरण करने एवं सेवाओं संबंधी वैकल्पिक रास्ते विकसित करें। हमें इस धारणा को तोड़ना होगा कि केवल विशाल कारपोरेशन ही अर्थव्यवस्था और समाज को 'सुचारु रूप से चला' सकते हैं। विकल्प यह है कि हम उस कारपोरेट ताकत जिसे अब तक चुनौती नहीं दी गयी है, के आत्मघाती विचार को चुनौती दें। जाहिर है, हम यह सब घटित होने की अनुमति नहीं दे सकते। हमें संघर्ष करना ही होगा। ❑

तमिलनाडु के लिए, लेह में लद्दाख के लिए और एक राष्ट्रीय स्तर पर वैकल्पिक ऊर्जा के लिए बोधगया, बिहार में हो चुके हैं। संगम की एक खास बात यह है कि स्थानीय परंपरागत ज्ञान से कुछ सूत्र पकड़कर आगे विकल्प के बारे में सोचते हैं, जिसमें आधुनिक ज्ञान भी जुड़ सकता है। जो समुदाय सैकड़ों सालों से अपने अनुभव व हुनर को जिन्दा रखकर अपनी आजीविका चला रहे हैं, उनसे बहुत कुछ सीखा जा सकता है। कच्छ में वैकल्पिक शिक्षा के क्षेत्र में अनूठे काम हो रहे हैं। यहां के गांधीवादी रमेश भाई बताते हैं कि 'विकल्प की शिक्षा अनुभव आधारित हो, अनुबंध यानी उसका जीवन से जुड़ाव हो और आनंददायक हो। यहां अलग-अलग तरह की सात शालाएं चल रही हैं—जैसे हुनर शाला, कारीगर शाला, सागर शाला, सुर शाला।'

कारीगर शाला जिसमें केवल किताबी ज्ञान नहीं, बल्कि हाथ से जुड़े काम सिखाये जाते हैं। इसमें वे बच्चे प्रवेश लेते हैं, जिन्होंने स्कूल छोड़ दिया है। हुनर शाला में इस साल 23 बच्चे हैं। यहां मकान बनाना (कच्छ की पारम्परिक शैली पर आधारित) कारपेंटरी, इलेक्ट्रिकल्स, प्लम्बिंग आदि का काम सिखाया जाता है। एक साल का पाठ्यक्रम होता है। हुनर शाला के शिक्षक अतुल बताते हैं कि 'हम बच्चों को गणित, भाषा और अन्य विषयों की पढ़ाई करवाते हैं। इसी प्रकार, हम कारीगर शाला में स्थानीय लोगों को भूकंपरोधी मकान बनाने का प्रशिक्षण देते हैं। अब ये कारीगर ऐसे प्रशिक्षित हो गये हैं कि आबूधाबी में एक बड़ा मकान बनाने गये थे। सागर शाला के बारे में धर्मेन्द्र कुमार बताते हैं कि हम ऐसे बच्चों को हमारी शाला में लेते हैं, जिनके मां-बाप पलायन करके आते हैं, जो मछुआरे होते हैं। हमारी शाला समुद्र के किनारे ही लगती है। जहां बच्चे होते हैं, वहीं पढ़ाने में सहूलियत होती है। अब सरकार ने इसे भी मान्यता दे दी है। बच्चों को मध्याह्न भोजन भी मिलने लगा है। इन शालाओं में 800 बच्चे पढ़ रहे हैं।

भुज के सलीम भाई बताने लगे 'यहां पशुपालक मालधारी कहलाते हैं। बन्नी की भैंस प्रसिद्ध है। एक भैंस 1 लाख की बिकती है, भैंस हमारी नेनो है। टाटा की नेनो कार भी एक लाख में ही बिकती है। और जब नेनो की जिन्दगी खत्म हो जाती है, उसे बेचने पर न के बराबर रुपये मिलते हैं। फिर भी हमारी सरकार टाटा को मुफ्त में जमीन देती है और हम अपनी जमीन पर हक मांगते हैं तो हिचकिचाती है।' वे पशुओं की बीमारी और नस्लों से भलीभांति परिचित हैं। एक विदेशी बबूल जिसे गांडा बावेल कहते हैं, जो पूरे कच्छ में फैल गयी है, को खाकर बकरियां मर जाती हैं। वे कहते हैं कि पहले हम सौराष्ट्र के किसानों को बैल जोड़ी देते थे, आजकल के माहौल में उधर जाना कम हो गया है। 3 साल से सूखा पड़ा है, मवेशियों को चारे पानी की बहुत समस्या हो रही है।

इसके पहले संगम में अजरक प्रिंटिंग के लिए मशहूर कलाकार धमड़का के जहांगीर खत्री हमारे शिक्षक बने थे। उन्होंने हमें प्राकृतिक रंगों के बनाने से लेकर प्रिंटिंग तक की विधि समझायी। जहांगीर भाई के परिवार में यह धंधा बारह पीढ़ियों से हो रहा है। 26 साल से वे इसे कर रहे हैं।

कुल मिलाकर, विकल्प संगम का पूरा वातावरण सृजनात्मक था। सबके पास उम्मीद की कहानियां थीं। सुनने का धीरज था। सुनकर सीखने की तमीज थी। हर कोई कुछ सुनकर गुनना चाहता है। भावी भविष्य गढ़ना चाहता था। यहां आधी महिलाएं थीं। कुछ गांव की सरपंच भी आयी थीं। बराबरी और समानता का समाज ऐसा ही होगा, जहां महिलाएं हर क्षेत्र में बराबरी से हिस्सा लें। ❑

7 मई : गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर जयन्ती : नमन्

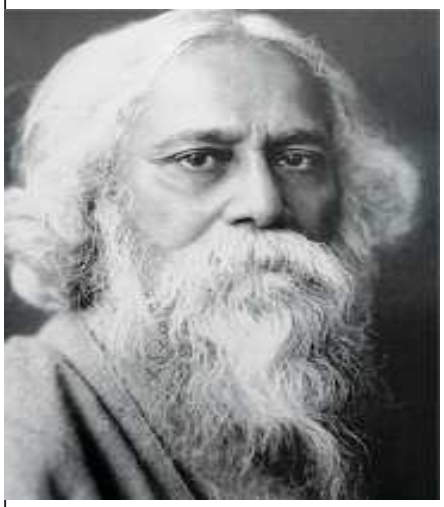

आमरा मिली छी
आज मायरे डाके।
आज हम मां के आह्वान पर
एकत्र हुए हैं
कब तक भाई-भाई जुदा
रह सकते हैं?
एक ही परिवार के होकर
अजनबियों जैसा व्यवहार
कर सकते हैं?
हमने कुछ समय से
अपने मन में यह आवाज सुनी है
इसने हमारे अन्तस्थल को छुआ है।
अब हमें कौन रोक सकता है?
हम जहां कहीं भी हों
हमारे भीतर प्रवाहित रक्त में
हमें जोड़े हुए है
जिसका हृदय इस भावना से शून्य है!
अब हमें मान-मर्यादा की परवाह नहीं
हमने अपने आंसू पोंछ डाले हैं
भाई को भाईयों के साथ खड़े देख
हमारे हृदय में नयी आशा जगी है
वर्षों की कोशिश के बाद
हम इस तरह समूहों में इकट्ठे हुए हैं
आओ फिर मां का दर्शन करो
तुम सभी पूर्ण संगठित उसके लाल
(कांग्रेस अधिवेशन 1886 में गाया हुआ गीत)

गुलामी को न्यौता देने वाली स्मार्ट सिटी परियोजना

❑ मुर्शरफ अली

दिल्ली का तालकटोरा इंडोर स्टेडियम खचाखच भरा हुआ था। मंच पर जिस नाम की घोषणा हो रही थी वह शख्स चलता हुआ वहां पहुंचता है। मंच संचालक ने उसका स्वागत करते हुए कहा, ''इन्होंने कड़ी मेहनत, लगन और निष्ठा से काम करके इतने सदस्यों को इस नेटवर्क से जोड़ा है कि इन्हें 'डायमंड' के खिताब से नवाजा जा रहा है।' इसी बीच एक महिला मेहमान को मंच पर आमंत्रित किया जाता है जो उस शख्स की टाई में एक टाई-पिन लगा देती है और इसके बाद हॉल तालियों से गूंज उठता है। वह शख्स वापस अपने स्थान की ओर चल देता है और मंच संचालक दूसरे लोगों का नाम पुकारने लगता है। लोग एक-एक करके मंच पर आते हैं और किसी को डायमंड, गोल्ड व किसी को सिल्वर के खिताब प्रदान किये जाते हैं। शायद इस बात को दस साल बीत चुके होंगे जब भारत का मध्यम वर्ग अमेरिका की कंपनी 'एम-वे' के जाल में फंसकर उसका दीवाना हो रहा था। स्कूल का मास्टर, दफ्तर का बाबू अधिकारी, डॉक्टर, वकील सभी लोग, सदस्यों की चेन बनाने में लग गये थे। वह लोगों की बकायदा क्लास लगाकर अपने ही जैसे अन्य लोगों को समझा रहे थे कि वह केवल तीन सदस्य बनाये और इन सदस्यों की सदस्यता राशि का एक हिस्सा उनके खाते में चला जायेगा और वह तीन जब अपने तीन सदस्य बनायेंगे तो उनकी भी सदस्यता राशि का एक हिस्सा आपके खाते में चला जायेगा और इस तरह बिना ज्यादा मेहनत किये हर महीने आपके खाते में रकम जमा होती जायेगी कि आप उसे खर्च नहीं कर पायेंगे। इस कम्पनी ने आदमी के लालच को अपने प्रचार का हिस्सा बनाकर उसे बिना ज्यादा मेहनत के थोड़े-से पैसे खर्च करके अमीर बनने का सपना दिखाया था। लेकिन वह सपना कुछ ही दिनों में टूट गया। लोग अपनी-अपनी रकम गंवा कर खामोश बैठ गये। हां, वह कम्पनी इससे माला-माल हो गयी।

लोगों को झूठे सपने दिखाने का काम छोटे-मोटे ठग तो करते ही रहते हैं लेकिन यही काम विश्व बैंक और आई. एम. एफ. दुनिया के अल्पविकसित व विकासशील देशों के साथ करते हैं। विभिन्न देशों की ठगी के इस काम में अमेरिका नेतृत्वकारी भूमिका निभाता है। देशों को अपने जाल में फांसने के तरीकों का अविष्कार करने वाले विशेषज्ञों की एक पूरी टीम उसके लिए काम करती है। *मुंशी प्रेमचंद* की कहानी *दो बीघा जमीन* का महाजन जिस तरह किसान को कर्ज के जाल में फांसकर उसकी सारी जमीन अपने नाम करा लेता है और बेगार अलग से लेता है बिल्कुल यही तरीका यह अमेरिका इन तथाकथित विकास एजेंसियों के माध्यम से अपनाता है।

आखिर स्मार्ट सिटी क्या है? इसे जानने के लिए हमें 'आईबीएम' द्वारा दी गयी परिभाषा को जानना होगा। स्मार्ट सिटी, अपने संसाधनों में ज्यादा से ज्यादा सूचना व संचार तकनीक का बुद्धिमत्तापूर्ण व कुशलतापूर्वक इस्तेमाल करती है, जिससे लागत व ऊर्जा की बचत होती है। अमेरिका की मार्केट रिसर्च व सलाहदाता कम्पनी 'फ्रांस्ट एण्ड सल्लीवान' ने स्मार्ट सिटी की आठ विशेषताएं बतायी हैं। 1. स्मार्ट एनर्जी जिसका मतलब ऊर्जा के समस्त स्रोतों का डिजीटलाइजेशन किया जाना है। इसके लिए स्मार्ट ग्रिड व स्मार्ट मीटर लगाये जायेंगे व ऊर्जा का बुद्धिमत्तापूर्ण इस्तेमाल किया जायेगा। सड़कों, गलियों की बिजली तभी जलेगी जब उस पर आवागमन होगा। नहीं होने की स्थिति में बिजली अपने आप बंद हो जायेगी। 2. स्मार्ट इमारतें होंगी, जिनमें चढ़ने उतरने की स्वचालित व्यवस्था होगी। हर इमारत के चप्पे-चप्पे पर क्लोज सर्किट कैमरे लगे होंगे। 3. स्मार्ट आवागमन होगा। इसके तहत एडवांस ट्रैफिक एवं पार्किंग मैनेजमेंट सिस्टम का इस्तेमाल किया जाता है। ग्लोबल इण्टेलिजेंस ट्रांसपोर्टेशन सिस्टम जो सेंसर, सर्विलेंस कैमरे व कम्प्यूटर द्वारा चलाये जाने वाली तकनीक है, उसका माल ढुलाई में प्रयोग किया जाता है। 4. स्मार्ट टैक्नालॉजी के तहत स्मार्ट सिटी में 4 जी कनेक्टिविटी होगी, सुपर ब्राडबैंड स्पीड होगी। 5. स्मार्ट इंफ्रास्ट्रक्चर में पूरे शहर में सेंसर नेटवर्क, पानी आपूर्ति व ठोस कचरे का डिजिटल प्रबंधन शामिल है। 6. स्मार्ट शिक्षा एवं स्मार्ट गवर्नेन्स में ई शिक्षा व ई गवर्नेन्स आता है। इसी में आपदा प्रबंधन शामिल है। 7. स्मार्ट हेल्थकेयर में आधुनिक स्वास्थ्य सेवा उपकरणों और देखभाल की अत्याधुनिक तकनीक को इस्तेमाल किया जाना है। 8. स्मार्ट सुरक्षा में आधुनिक निगरानी तकनीक, बायोमेट्रिक रिकॉर्ड का इस्तेमाल आदि शामिल है। इस सारी आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल करने के लिए स्मार्ट सिटी में स्मार्ट नागरिक का होना आवश्यक शर्त है इसलिए यह चुस्त शहर केवल ऐसे नागरिकों को अपने यहां बसाना पसंद करेगा जो उसकी तरह ही स्मार्ट हों।

अपने चुनाव घोषणा-पत्र में भी बीजेपी अपनी शहरी नीति के बारे में 'शहरी क्षेत्र उच्च वृद्धि के केन्द्र' शीर्षक से लिखा कि 'हमारे नगर लंबे समय तक गरीबी तथा बाधाओं के प्रतिबिम्ब नहीं बने रहने चाहिए

बल्कि उन्हें दक्षता, गति तथा उच्च जीवन स्तर का प्रतीक होना चाहिए।'' यह घोषणा महामंदी की दलदल में फंस चुकी अमरीकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा हाथ-पैर मारकर बाहर निकलने की कोशिशों की प्रतिध्वनि थी।

स्मार्ट सिटी परियोजना, मृत्यु की ओर बढ़ रही इन कम्पनियों के जीवन-वायु के समान है इसलिए उन्होंने इसे व्यवहार में उतारने के लिए पूरी ताकत झोंक दी है। वे इसे युद्धस्तर पर लागू कराना चाहती है। नये उत्पाद को जिस आक्रामक विज्ञापन शैली के माध्यम से बाजार में उतारा जाता है वे इसके लिए वही तरीका अपना रही है। पूरी दुनिया में इस परियोजना को लागू कराने के लिए अमेरिका में विद्युत उपकरण बनाने वाली कम्पनी 'एस एंड सी इलेक्ट्रिक' ने 'स्मार्ट ग्रिड न्यूज डॉट कॉम, के मुख्य विश्लेषक जेस्सी बर्स्ट की अध्यक्षता में 2013 में 'स्मार्ट सिटी काउंसिल' का गठन किया है, जिसका लक्ष्य पूरी दुनिया में 5000 स्मार्ट सिटी बनाने का तय किया गया है। इसके संचालन मंडल में अमरीका की अनेक ऊर्जा जल तथा मालवाहक कम्पनियां शामिल हैं। यह काउंसिल अब तक स्मार्ट सिटी को लेकर अनेक सम्मेलन कर चुकी है तथा 15 से 17 सितंबर 2015 तक 'स्मार्ट सिटी सप्ताह' का विशाल आयोजन वाशिंगटन डी. सी. में कर रही है। इसने 2013 में पहली 'स्मार्ट सिटी तैयारी गाइड' जारी की। भारत में भी इसकी शाखा *'स्मार्ट सिटी काउंसिल इंडिया'* के नाम से खोल दी गयी है और यहां स्मार्ट सिटी परियोजना इसी के दिशा-निर्देशन में चलेगी। भारत में इसका अध्यक्ष उद्यमी प्रताप पडोडो को बनाया गया है। पडोडे प्रीमाइसिंग, सिटीज रिपोर्ट को तैयार करने वाले हैं, जिसमें बताया गया है कि भारत में निर्मित होने वाले 20 स्मार्ट सिटीज कैसे विकास के केन्द्र बनने वाले है। यह रिपोर्ट 17-18 फरवरी 2015 को दिल्ली के हेबीटेट सेंटर में आयोजित द्वितीय स्मार्ट सिटीज विकसित करने में अमेरिकी कम्पनियों के लिए अवसर नामक विषय पर चर्चा की गयी। भारत में स्मार्ट सिटी को लेकर पहला सम्मेलन 22-23 अगस्त 2014 को मुम्बई में सम्पन्न हुआ। स्मार्ट सिटी काउंसिल इंडिया 6 व 8 अक्टूबर 2015 को दिल्ली तथा मुम्बई में स्मार्ट इनवेस्टमेंट सम्मेलन की। 25 जून 2015 को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 100 स्मार्ट सिटीज मिशन, 500 शहरों का कायाकल्प करने के लिए *अटल कायाकल्प मिशन (अमरुत)* व *'हाउसिंग फॉर ऑल'* के तहत शहरी क्षेत्र में सन् 2020 तक दो करोड़ मकान बनाने की योजना का विधिवत उद्घाटन दिल्ली के विज्ञान भवन में किया। इस वर्ष स्मार्ट सिटी बनाने के लिए 20 शहरों को चुना जायेगा। अगले दो वर्षों में 40 और शहर चुने जायेंगे। शहरों का चुनाव सिटी चैलेंज प्रतियोगिता कराकर किया जायेगा। हालांकि 76 शहर जहां स्मार्ट सिटी बनाये जायेंगे, उनकी सूची पहले ही जारी की जा चुकी है लेकिन विरोध को समाप्त करने के लिए लोगों को इसमें शामिल किया जायेगा। लोग इसके अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले घातक प्रभाव पर चर्चा न करें, किस तरह हम विदेशी कर्ज के जाल में फंस जायेंगे, इस पर सोचने के स्थान पर लोग भेड़ चाल का शिकार हो जायेंगे। *इसलिए इस तरह का माहौल मीडिया के द्वारा बनाया जायेगा कि लोग इसकी मांग स्वयं करने लगेंगे। स्मार्ट सिटी के पक्ष में लिखे गये लेखों की अखबारों की पत्रिकाओं में बाढ़ सी आ जायेगी, चैनलों पर पैनल डिस्कशन इस तरह कराये जायेंगे कि स्मार्ट सिटी के आलोचकों को विकास विरोध की और खलनायक सिद्ध किया जा सके।* इसी तरह का माहौल 2011 में शुरू किये गये भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन में बनाया गया था। तब आक्रामक प्रचार शैली ने *लोगों के दिमाग में यह बैठा दिया था कि उनकी सब समस्याओं की जड़ लोकपाल नहीं बन पाना है।* अगर यह बन गया तो उनकी सारी समस्याओं का समाधान हो जायेगा लेकिन *जिस मकसद के लिए यह आंदोलन शुरू करवाया गया था जब वह हासिल कर लिया गया (मोदी सरकार का गठन) तो जनलोकपाल का प्रचार समाप्त हो गया। आंदोलन पूरी तरह प्रायोजित था, इसका प्रभाव आज आपके सामने है। भ्रष्टाचार के इतने मामले सामने आने पर भी आज अन्ना स्वामी रामदेव खामोश हैं। आज सारा का सारा काम विदेशी कम्पनियों के हवाले किया जा रहा है। तब स्वामी रामदेव का भारत स्वाभिमान आंदोलन राष्ट्रीय मंच से गायब है।* सिटी चैलेंज प्रतियोगिता का प्रबंधन भी अमेरिका की तथाकथित लोकोपकारी संस्था *ब्लूमबर्ग* को सौंपा गया है। यह संस्था, अमेरिका के दूसरे सबसे अमीर आदमी, मीडिया गूगल व न्यूयार्क के पूर्व मेयर माईकल ब्लूमबर्ग ने स्थापित की है। ब्लूमबर्ग प्रकट रूप में मार्ग दुर्घटनाओं को रोकने के लिए यातायात के नियम व कानून बदलवाकर उसे सख्ती से लागू कराने के लिए जाने जाते हैं। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि स्मार्ट सिटी को चुनने से लेकर बनाने व उसके लिए कर्ज देने का सभी काम अमेरिकी कम्पनियां करेंगी। भारत सरकार के पास कोई अपनी व्यवस्था नहीं है जो वह मामूली सा मामूली काम भी खुद कर सके। स्मार्ट सिटी चुनने की प्रतियोगिता के पहले चरण में चुने जाने वाले शहर की नगरपालिका या निगम को यह ब्यौरा देना पड़ेगा। 1. तंत्र है या नहीं। 2. ई. न्यूज लेटर का प्रकाशन करती है या नहीं, 3. समस्त सरकारी खर्च जनता के लिए ऑन लाइन उपलब्ध है या नहीं, 4. स्वच्छ भारत के तहत 2011 की जनगणना के बाद इसने क्षेत्र में कम से कम 5 प्रतिशत

शौचालयों का निर्माण किया है, 5. कर्मचारियों के वेतन भुगतान का पिछला रिकार्ड कैसा है?

इस विवरण के आधार पर स्मार्ट सिटी का चुनाव होने के बाद दूसरे चरण में उन 20 शहरों को चुना जायेगा जिन्हें स्मार्ट सिटी बनाने के लिए फंड देने से पहले उस शहर में एक 'स्पेशल पर्पज वेहिकल' या विशेष उद्देश्य वाहन यानी एक ऐसी सस्था लायी जायेगी जो कम्पनी ऐक्ट के तहत रजिस्टर्ड होगी। इसका प्रकट में काम स्मार्ट सिटी परियोजना के लिए कोष का इंतजाम करना तथा उस शहर की पूरी परियोजना की देखरेख करना होगा लेकिन *छिपा हुआ एजेंडा दूसरा ही होगा।* इसका मुखिया केन्द्र सरकार द्वारा नामित सी.ई.ओ. होगा। इस स्पेशल पर्पज वेहिकल में राज्य अथवा केन्द्र शासित प्रदेश, शहरी स्थानीय निकाय व निजी क्षेत्र की अनुपातिक हिस्सेदारी होगी। नगर निगम को कर्ज देने के लिए एक ओर संस्था *फाइनडेटर* नाम से बनायी जायेगी जो विभिन्न स्रोतों से धन हासिल करेगी तथा उस धन को स्थानीय व्यापारिक बैंक को उपलब्ध करायेगी और बैंक उसे नगर निगम को बतौज कर्ज देगा।

16 मई 2014 में नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री पद की शपथ लेने के एक माह के अंदर ही जो पहली घोषणा की वह भारत में 100 स्मार्ट सिटी बनाने की थी। यह वह दौर था जब देश के किसानों को बारिश से भारी नुकसान हुआ था और वे बड़ी तादाद में आत्महत्या का रास्ता चुन रहे थे लेकिन हमारे प्रधानमंत्री उनकी मदद करने स्थान पर देश के सामने एक बेहद खर्चीली व बेजरूरत परियोजना पेश कर रहे थे। बस इसे लागू करने के लिए सत्ता पाने का इंतजार था प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपनी अमेरिका यात्रा पर 30 सितंबर 2014 को जो संयुक्त बयान जारी किया उसमें अमेरिकी राष्ट्रपति *बराक ओबामा* ने मोदी की इस बात के लिए प्रशंसा की कि उन्होंने उन्हें अजमेर, इलाहाबाद व विशाखापट्टनम में स्मार्ट सिटी बनाने का काम सौंपा है। इसके बाद तो स्मार्ट सिटी बनाने के लिए 'मेमोरंडम ऑफ अंडरस्टैण्डिंग' पर हस्ताक्षर करने वाले देशों की लाइन लग गयी है। आगरा और बनारस जापान की मदद से स्मार्ट सिटी बनेंगे तो हैदराबाद को दुबई स्मार्ट सिटी बनाना चाहता है। सिंगापुर आंध्र की राजधानी और दिल्ली को स्मार्ट सिटी बनाना चाहता है। इजराईल, स्मार्ट सिटी बनाने में महाराष्ट्र की मदद करना चाहता है। फ्रांस, नागपुर को स्मार्ट सिटी में बदलना चाहता है। कतर का सुल्तान स्मार्ट सिटी परियोजना में एक लाख करोड़ रुपये निवेश करने की इच्छा जता चुका है। कनाडा, चीन और रूस भी कमाई के इस मौके को खोना नहीं चाहते हैं। *कुल मिलाकर देश पूरी तरह विश्व में कर्जदाता महाजनों से घिर चुका है।* इस तरह की गैरजरूरी परियोजनाओं का नतीजा क्या निकलकर सामने आता है वह हम अमरीकी धोखेबाज बिजली कम्पनी एनरॉन के रूप में देख चुके हैं। 13 दिन की सरकार में अटल जी द्वारा इस अमेरिकी कम्पनी को फिर से मंजूरी दिये जाने की हड़बड़ी ने देश को अरबों रुपये का नुकसान पहुंचाया है। अभी पिछले वर्ष नरेन्द्र मोदी ने जो मुम्बई, अहमदाबाद बुलेट ट्रेन की परियोजना को हरी झंडी दिखायी थी, उसकी लागत तब 60 हजार करोड़ रुपये आंकी गयी थी, जो अब वह बढ़कर 1 लाख हजार करोड़ हो गयी है। कुल 534 किलोमीटर की यात्रा को पांच घंटे कम करने के लिए देश के इतने धन को बर्बाद कर दिया गया है। वैसे भी संचार क्रांति के इस दौर में व्यापार वार्ताओं के लिए जब वीडियो कान्फ्रेसिंग की सुविधा मौजूद है तब व्यापार बढ़ाने के लिए मुम्बई से अहमदाबाद रोजाना चक्कर लगाने की बात अक्ल में बैठती नहीं है। विदेशी कर्ज पर आधारित इस खर्चीली परियोजना से व्यापार में कोई अभूतपूर्व वृद्धि होने नहीं जा रही है। यह परियोजना 2017 में शुरू होकर 2024 में पूरी होगी और तब इसका एक आदमी का एक तरफ का किराया 2800 रुपये बैठने का अनुमान लगाया गया है। कितने लोग इस ट्रेन से इतने महंगे किराये में सफर करेंगे इसका अंदाजा आसानी से लगाया जा सकता है। *निश्चय ही प्रीमियम ट्रेनों के घाटे में आने की तरह ही यह बुलेट ट्रेन भी भारत पर आर्थिक बोझ बनने वाली है। जब यह घाटे में जायेगी तो इसे औने-पौने दामों में निजी क्षेत्र को बेच दिया जायेगा। इसी तरह स्वचालित सीढ़ियों, लिफ्टों, चप्पे-चप्पे पर लगे सी.सी.टी.वी. कैमरों, सेंसरों और डिजिटल तकनीक से लैस ये महंगे स्मार्ट शहर चीन की तरह की 'घोस्ट सिटी' या 'स्मार्ट वीरान शहरों' में बदलने वाले हैं।* स्मार्ट सिटी जैसी परियोजना को चुनकर चीन ने अपना भारी नुकसान किया है हालांकि इन्हें बनाने में चीन की अपनी कम्पनियों की भूमिका है। साथ ही उसे इसके लिए बाहर से कर्ज लेने की जरूरत भी नहीं पड़ी है। वहां 6 करोड़ 40 लाख अपार्टमेंट महंगे होने के कारण आज वीरान पड़े हैं। यही हाल अंगोला का है जहां चीन ने स्मार्ट सिटी की सम्पत्ति की कीमतें बाजार भाव से 50 से 70 प्रतिशत ज्यादा होती है। इसके अलावा वहां रख-रखाव यानी मेंटीनेंस पर भारी खर्च आता है, जिसे चुकाना हर एक के बस की बात नहीं है। *जिस तरह न्यूनतम सरकार के विचार को व्यवहार में उतारकर सड़कें निजी क्षेत्र को दे दी गयी हैं, जो टोल प्लाजा के माध्यम से अपनी जमींदारी चला रहे हैं उसी तरह इन 'चुस्त शहरों का स्वामित्व भी निजी क्षेत्र के पास जाने वाला है। वे ही यहां रहने वालों की पात्रता तय करेंगे।* 2011 की जातीय जनगणना ने यह बता ही दिया है कि भारत के 75 प्रतिशत परिवार पांच हजार रुपये

मासिक की आमदनी से कम पर पहुंच गये हैं और उन्हें तो ऐसी 'स्मार्ट सिटी' से बाहर करने का रास्ता निकाल ही लिया गया है। 29 जनवरी 2015 को मुम्बई में वर्ल्ड ट्रेड सेंटर, ऑल इंडिया एसोसिएशन ऑफ इंडस्ट्रीज व इण्डो-फ्रेंच चैम्बर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज ने मिलकर एक सामूहिक बहस आयोजित की थी, जिसका विषय था *'रियलिटी इन द मेकिंग'*। उसमें मुक्त बाजार समर्थक अर्थशास्त्री *लवीश भंडारी* ने अपने बड़बोलेपन अथवा अति उत्साह में वह सच्चाई उजागर कर दी, जिसे नरेन्द्र मोदी ने छिपा रखा था।

लातिन अमरीकी देश होण्डुरास में बनायी गयी इस तरह की स्मार्ट सिटीज को 'चार्टड सिटी' नाम दिया गया, जिसका संचालन उन कॉरपोरेट के हाथ में है, जिन्होंने होण्डुरास के किसानों से बलपूर्वक जमीन अधिग्रहण की थी। वहां भी स्थानीय निवासियों तथा किसानों को इन शहरों से बाहर रखने के लिए हिंसा का सहारा लिया जा रहा है।

खास बात यह है कि *ये शहर उस देश के कानूनों से बाहर एक अलग देश बन गये हैं क्योंकि 'स्पेशल इकोनॉमिक जोन' की तरह ही वहां भी उस देश के कानून लागू नहीं होते। गुजरात में भी 2011 से 886 एकड़ में अहमदाबाद के निकट 'गुजरात इंटरनेशनल फाइनेंस टैक सिटी (गिफ्ट)' तथा धौलेरा में शंघाई से भी छह गुना बड़ा 903 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला 'स्पेशल इन्वेस्टमेंट जोन' सिंचित कृषि भूमि में बनाया जा रहा है। जिन किसानों की जमीनें बलपूर्वक अधिग्रहण करके यह स्मार्ट सिटी निर्मित की जा रही है वे आज भी इसका विरोध कर रहे हैं। यह अलग बात है कि कॉरपोरेट मीडिया उस विरोध को देश की जनता से छुपाये हुए हैं।*

ब्रिटेन की सलाहदाता फर्म 'अरूप' ने अनुमान लगाया है कि सन् 2020 तक स्मार्ट सिटी टेक्नोलॉजी व सेवाओं का विश्व बाजार 408 बिलियन डालर पहुंच जायेगा। इसके अलावा *इस परियोजना का जो सबसे खतरनाक पहलू है उस पर तो बिल्कुल चर्चा नहीं होने दी जायेगी। क्योंकि स्मार्ट सिटी 'डिजीटल सिटी' होगी, जिसके लिए लगातार इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, कल-पुर्जों की जरूरत होगी जिनकी आपूर्ति के लिए हम केवल विदेशी कम्पनियों पर निर्भर होंगे। जब यह कम्पनियां इन उपकरणों की आपूर्ति रोक देंगी तब हमारे ये स्मार्ट शहर एकदम ठप्प पड़कर सफेद हाथी में बदल जायेंगे।*

जिस तरह अमरीका ने इंदिरा गांधी द्वारा 1974 में परमाणु परीक्षण किये जाने के बाद अपने द्वारा लगाये गये परमाणु संयंत्र के लिए यूरेनियम की आपूर्ति रोक दी थी। हमारा विदेशी मुद्रा भंडार जो अब तक पेट्रोलियम पदार्थ, रासायनिक खाद, हथियारों तथा अन्य जरूरत की वस्तुओं पर खर्च होता है, अब उसका बड़ा भाग स्मार्ट सिटीज के उपकरणों पर खर्च होने लगेगा।

'यू एस इंडिया बिजनेस कौंसिल' ने सितंबर 2014 में जारी 'फाइनेंशियल स्ट्रटेजी फॉर स्मार्ट सिटीज' नामक अपने रिसर्च पेपर में बताया है कि स्मार्ट सिटीज एक नयी तरह की 'इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी), नामक इंडस्ट्रीज पर निर्भर होगी, जिसके अंतर्गत अरबों की तादाद में 'एम्बेडेड सेंसर' की जरूरत होगी। रिसर्च पेपर में बताया गया है कि सन् 2020 तक 50 अरब करोड़ सेंसर की जरूरत होगी, जिसका अनुमानित व्यापार 14 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर पहुंच जायेगा।

इन उपकरणों पर अमेरिकी तथा अन्य विदेशी कम्पनियों की इजारेदारी होने के कारण वह इनकी मनमानी कीमत वसूलेंगी और इस तरह हम स्थायी रूप से उनके गुलाम बन जायेंगे। इस अकूत मुनाफे को बनाये रखने के लिए वह 'इंटेलेक्चुएल प्रापर्टी राइट' कानून को सख्ती से लागू करायेंगे।

इस बेपनाह आमदनी से उत्साहित होकर ही विश्व पूंजीवाद ने अपने प्रचार के समस्त संसाधनों को 'स्मार्ट सिटी' नामक इस नये उत्पाद को बेचने में झोंक दिया है। लेकिन बाजार में उतारे गये इस उत्पाद ने जनपक्षधर लोगों, पार्टियों व संस्थाओं को चिन्तित कर दिया है। इसके साथ अनेक अनुत्तरित सवाल खड़े हो गये हैं। लोग कह रहे हैं कि मुक्त बाजार की आर्थिक नीतियों ने पूंजी को बहुत थोड़े से हाथों में केन्द्रित कर दिया है, इसलिए ये थोड़े से लोग अपने आपको आम जनता से सुरक्षित रखने के लिए इस तरह के बख्तरबंद शहरों का निर्माण करा रहे हैं। यह चर्चा होने लगी है कि इन स्मार्ट सिटीज के माध्यम से विश्व को नियंत्रित करने वाली काली ताकतें 'मास सर्विलेंस' कर रही हैं।

इस तरह के शहर 'इलेक्ट्रॉनिक पुलिस स्टेट' अथवा 'निगरानी राज्य' में बदल गये हैं। प्रायवेसी इंटरनेशनल ने 2007 में सर्वे कराया, जिससे पाया कि दुनिया के 47 देशों में जन निगरानी बढ़ी है तथा लोगों की निजता के सुरक्षा उपायों का क्षरण हुआ है। ❑

'सर्वोदय जगत' के सभी सुहृद पाठकों, शुभचिन्तकों, लेखकों से अनुरोध है कि अपने महत्त्वपूर्ण आलेख, रचनाएं, विचार एवं सुझाव पत्रिका के लिए भेजें। –सं.

3 मई : जाकिर हुसैन पुण्य-तिथि

कछुआ और खरगोश

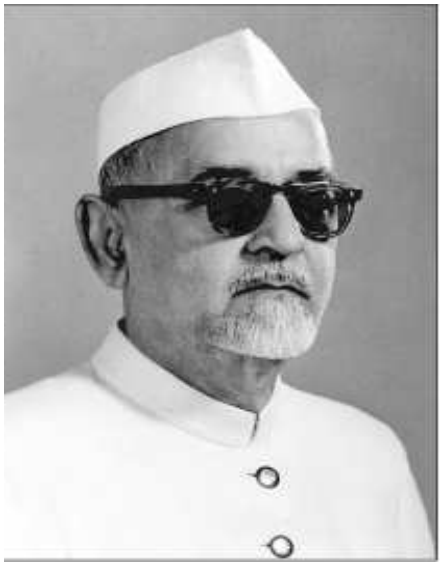

हार और जीत की इतनी पुरानी कहानी। आज नये लोगों को तो इसकी सीख भी पुरानी, घिसी-पिटी ही लगेगी। पर जब इसी कहानी को सुनाने वाले डॉ. जाकिर हुसैन जैसे शिक्षाविद हों तो पक्का भरोसा है कि सब कुछ बदल जाता है। फुर्तीला खरगोश यहां आलस नहीं दिखाता, रास्ते में सोता नहीं है। और सातत्य निभाने वाला कछुआ यहां ठिठक जाता है और हम सबके सामने कुछ बड़े प्रश्न रख जाता है। यह कहानी केवल कछुआ और खरगोश की नहीं, बल्कि एक जमाने, उसके समाज, उसकी संस्कृति और उसका साहित्य, सामाजिक परिवर्तन की लेती करवटों की कहानी है। कहानी है जमुना नदी, जंगल, जानवर, तीतर, खरगोश, यमुना की मछलियां तथा बच्चों के पाठशाला के प्रोफेसर, पंडित और मुल्ला की। यह कहानी है मनुष्य जाति के परस्पर संबंधों की और इस कहानी के पात्रों से सीख लेने की। प्रस्तुत है उनकी इस एक लंबी कहानी का संपादित रूप। **–सं.**

राजधानी दिल्ली से लगभग पांच मील की दूरी पर जमुना के किनारे ओखला नाम का एक छोटा-सा गांव बसा है। पहले लोग दिल्ली से मछलियां पकड़ने के लिए यहीं आया करते थे। फिर कोई 20-25 वर्ष हुए, कुछ मस्त-मनमौजी लोग यहां आकर बसने लगे। उन्होंने एक पाठशाला बना ली। नासमझ तो थे ही, पर न जाने क्या लगन थी कि बिना किसी साजो-सामान के इस गांव के पास खुले मैदान में उन्होंने डेरा डाल दिया। पल्ले में न पैसा, न कौड़ी और बड़े-बड़े भवन बनाने शुरू कर दिये। यह भवन कैसे पूरे होते? वर्षों ऐसे भवनों में स्वयं भी रहे और पाठशाला के बच्चों को भी रखा जिनके दरवाजों में किवाड़ तक न थे। हवा एक तरफ से बड़े भवन में घुसती तो दूसरे सिरे तक गाती, सीटियां बजाती चली जाती। किन्तु ये थे कि अपनी जगह पर डटे रहे।

देखने में तो ये भोले-भाले नादान से दिखायी पड़ते थे, पर थे अपनी धुन के पक्के, मस्त और मगन। जमे रहे तो इनका काम भी जमता गया, बढ़ता गया। अब वहां एक बहुत बड़ी पाठशाला बनकर तैयार हो गयी। दूर-दूर से लड़के-लड़कियां यहां पढ़ने के लिए आते और वे लेक्चर देते।

खैर, वह जमाना तो गुजर गया। हर जमाना गुजर ही जाता है। अब वहां भवन हैं, पुस्तकें भी हैं और अध्यापक भी हैं। नियम और अनुशासन भी है। ढंग है, व्यवस्था है, काम है। सब इसे जान-पहचान गये हैं। आदमी पहचानता हो या न पहचानता हो, आदमी का कोई ठिकाना नहीं। किन्तु जानवर, पेड़, जमुना की मछलियां, जिनमें से कुछ इन अध्यापकों से बातें करने पुल के खंभों पर चढ़ते हुए भी देखी गयी हैं, नदी के कछुए, पास के खेतों के तीतर, खरगोश सब इन्हें जान गये हैं और इनके मित्र बन गये हैं।

इस समय आपको उन्हीं दोस्तों का एक किस्सा सुनाता हूं :

"ओखला में जमुना के किनारे बरसात के मौसम में जहां तक मेरी नजर जाती है पानी ही पानी दिखायी देता है। किन्तु जब पानी उतर जाता है, पुल पार करके चले जाइए तो लकड़ी के तख्तों के नीचे-नीचे रेत का एक मैदान होता है और पुल के उस सिरे से नीचे की ओर उतर लीजिए तो नदी के किनारे-किनारे दूर तक जा सकते हैं। यहां से पाठशाला के अध्यापक कोई कभी-कभी, कोई प्रतिदिन सबेरे-सबेरे टहलने आ जाते हैं। कभी-कभी पाठशाला के बच्चे भी इधर सैर को घूमने निकल आते हैं। यहीं नदी में एक कछुआ, बहुत बड़ा-सा कछुआ अपने खोल में बंद, जैसे एक मजबूत किले में हो, रहता है और जब देखता है कि कोई नहीं है तो वह भी पानी से निकलकर धीरे-धीरे चहलकदमी तो क्या, 40 कदम तो बहुत होते हैं, आठ-दस कदम चल लेता है।

एक दिन मौलवी गुफरान उधर टहलने गये, उन्हें कछुआ कई बार देख चुका था। मौलवी साहब यूं भी कम बोलते थे इसलिए कुछ पूरी जान-पहचान की नौबत नहीं आयी थी। कछुआ उन्हें देखता तो आधा पानी में और आधा किनारे पर होता और मौलवी साहब इस विचार से कि जितना तेज चलूंगा उससे उतना ही वजन घटेगा, तेज-तेज कदमों से निकल जाते और चलते भी इस शान से थे कि उनकी दृष्टि अपने कदमों पर रहती। न इधर देखते, न उधर देखते, कहीं प्रकृति के मन बहलाने वाले दृश्य उनके स्वाभिमान को दुर्बल न कर दें। वह कछुआ उनका चेहरा देखता—काली-काली दाढ़ी की चमक देखता और सोचता कि बड़ा तेजस्वी चेहरा है। ध्यान-ज्ञान वाला मनुष्य दिखायी पड़ता है। उसने सोचा कि जो बात उसे इतने दिनों से सता रही है, वह उनसे पूछे।

इस विचार से एक दिन किनारे के पास बाहर निकल आया कि मौलवी साहब पास से गुजरेंगे तो पूछूंगा। मौलवी गुफरान निश्चित

समय पर गुजरे किन्तु कछुए की हिम्मत न पड़ी, कुछ न बोला और ये उसे देखे बिना ही आगे बढ़ गये। कछुआ दिन-भर उदास-उदास रहा कि मैं भी कैसा फिसड्डी हूं, मुल्लाजी से एक बात पूछने की हिम्मत न हुई। दूसरे दिन सुबह की नमाज से पहले की नमाज तहज्जुद के समय से किनारे पर आ बैठा कि कहीं सबेरे ही मुल्लाजी न निकल जायें। मौलवी गुफरान तो चाबी दी हुई घड़ी की तरह समय से बंधे थे। अपने ठीक समय पर वहां से गुजरे, मगर वह कछुआ अपने पोपले मुंह से एक बोल भी न निकाल पाया कि ये गजों आगे बढ़ गये। किन्तु हिम्मत करके कछुए ने अपनी बैठी-बैठी भर्राई हुई आवाज में चिल्लाकर पुकारा, मुल्लाजी, मुल्लाजी।

मौलवी गुफरान चलते-चलते जैसे ध्यान-ज्ञान में खो जाया करते थे—आवाज जो आयी तो समझे कि कोई अलौकिक ध्वनि है। जी धक से हो गया। अपने स्वभाव के विरुद्ध इधर-उधर देखा, आगे-पीछे, दाएं-बाएं, कुछ दिखायी नहीं दिया।

फिर आगे बढ़े तो कछुए ने जोर से आवाज लगायी, चिल्लाने में उसकी आवाज और भी फट गयी, ''हे मुल्लाजी क्षमा करो। जरा थमो, एक प्रश्न पूछना है।'' मुल्लाजी ठिठके, मुड़कर पीछे देखा तो एक बड़ा-सा कछुआ एक सख्त खोल से ढका हुआ, जैसे लोहे और सींग को मिलाकर युद्ध के टैंकों का कोई छोटा-सा नमूना बनाया हो, धीरे-धीरे उनके पीछे-पीछे आ रहा था। बोले, ''क्या बात है कहो न, बोलते क्यों नहीं?''

कछुआ रुक गया, जैसे रुकने का बहाना ढूंढ रहा हो, फिर बोला ''नमस्ते मुल्लाजी, नमस्ते! एक प्रश्न पूछना है आपसे। कृपया जरा थमो, अभी पा-लागन को आता हूं।''

मौलाना बोले, ''तसलीम, तसलीम! भई हमें तो देर हो रही है। जो पूछना हो, पूछिए।''

''प्रश्न यह है मुल्लाजी कि आपके इतिहास की पुस्तकें में क्या कहीं ये लिखा है कि प्राचीनकाल में कछुए और खरगोश की दौड़ हुई थी और भला क्या लिखा है कि कौन जीता था?''

सवाल ऐसा था जिसका संबंध प्राचीन इतिहास से था और उनका विषय तो था धर्मशास्त्र और धर्मज्ञान। उसमें कुत्ते, बिल्ली, खरगोश और कछुए का क्या काम! फिर आदमी भी ईमानदार थे, बोले, ''सच बात यह है कि मुझे मालूम नहीं, ये बात तो इतिहास का कोई विशेषज्ञ ही बतायेगा। ऐसा ही होगा तो कल अपने साथ पाठशाला के इतिहास के एक विशेषज्ञ को लेता आऊंगा। उनसे आप जो पूछना चाहें, पूछ लीजिएगा। मुझे आज्ञा दीजिए, बहुत देर हो गयी है।''

''अच्छा-अच्छा, मुल्लाजी, क्षमा करें। मैं कल इंतजार करूंगा।''

दूसरे दिन सुबह सबेरे कछुराम किनारे पर बैठ गये। मौलवी गुफरान ठीक अपने निश्चित समय पर आये। उनके साथ आज प्रो. कपचाक भी थे। दुबले-पतले, हाथ में एक कुबड़ी लकड़ी, उसे बार-बार घुमाते जाते या चलते-चलते जूते की नोक से उस पर ठोकर लगाते जाते। थोड़ी-थोड़ी देर के बाद गर्दन को विशेष ढंग से हलका-सा झटका भी देते रहते, जैसे अपने आपसे मन ही मन में बहस कर रहे हों।

आज मौलवी गुफरान तो स्वभाव के विपरीत पहले से ही पंडित कछुराम को खोज रहे थे। वे भी उनकी बाट जोह रहे थे। देखते ही मौलाना के मुंह से निकला 'तसलीम पंडितजी।''

और पंडित कछुराम बोले, ''नमस्ते। कल्याण हो, कल्याण। आप आ गये, जी अधिक प्रसन्न हुआ।''

''अब आप अपना वही प्रश्न पूछिए। यह प्रोफेसर कपचाक इतिहास के महान् विशेषज्ञ हैं। ये आपको जवाब देंगे।''

''प्रोफेसर कश्यपजी, एक बात हमें बहुत से सता रही है। कल मुल्लाजी से पूछी थी तो इन्होंने कहा कि हम नहीं जानते। प्रोफेसरजी को साथ लायेंगे। सो अब आपसे वही बात पूछनी है। बात यह है कि प्राचीन काल में क्या कभी खरगोश जाति के लोग और कछुआ जाति के लोगों में कोई दौड़ हुई थी और हुई थी तो जीत किसकी हुई थी और हारा कौन था? हमारे यहां पुरखों से यह बात चली आती है कि दौड़ हुई थी ओर कछुआ जीता था।''

प्रोफेसर कपचाक को ऐसा लगा कि पंडितजी ने उन्हें कोई बच्चों की कहानियां लिखने वाला अति साधारण-सा व्यक्ति समझ लिया है। बहुत नाखुश हुए। यूं भी वे जल्दी नाखुश हो जाया करते थे। बोले, ''महोदय, कछुए और खरगोश से मेरी विशेषज्ञता का क्या संबंध है? मैं तो इतिहास का अध्यापक हूं। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय जातियों के उत्थान और पतन की निरंतर प्रक्रिया पर चिन्तन और मनन मेरा काम है। सम्पत्ति की उत्पादक शक्तियों के स्वरूप, उनकी चुनौतियों की खोज और मनुष्य जाति के पारस्परिक संबंधों पर इन प्रभावों की व्याख्या, इंसानी समाज के आर्थिक वर्ग-भेद और उनमें निरंतर टकराव के फलस्वरूप अनिवार्य परिणामों और प्रभावों का स्पष्टीकरण, क्रांति के अनेक कारण और उनके सामने और आगे बढ़ने के रहस्यों और भेदों को अनुसंधान और विश्लेषण के द्वारा स्पष्ट करना, राजकीय स्तर पर अत्याचार और शोषण के आंतरिक विरोध पर प्रगाढ़ दृष्टि के साथ चिन्तन और उन राक्षसी वृत्तियों के पराजित और नष्ट होने पर मानवीयता के सच्चे इतिहास के एक बौद्धिक और यथार्थपूर्ण मानचित्र का इस प्रकार निर्माण करना कि भूतकाल से भविष्य तक उसका स्वरूप तर्क संगत रूप में सामने आ जाये—यह मेरा काम है। ये कछुए और खरगोश से संबंधित पूछताछ आपने मुझसे खूब की।''

बेचारे कछुए की सांस ऊपर-की-ऊपर, नीचे-की-नीचे रह गयी। घबराकर जो सांस अंदर को खींची तो झुर्रियों वाले चेहरे के नीचे

गर्दन में घीघे की तरह कुछ फूल-सा गया। फिर धीरे-धीरे ये बैठ गयी तो ऐसा लगा कि इनकी जान में जान आयी। प्रो. साहब से कुछ कहने का साहस कहां था। कुछ सहमी-सहमी आवाज से मुल्लाजी से बोले, ''मुल्लाजी, क्या बात हुई? क्या प्रोफेसरजी हमसे कुछ रूठ गये? इतनी ढेर-सी गालियां हमें क्यों दे डालीं? हमने अनजान होने के कारण एक बात पूछी थी, वे तो बरस ही पड़े। मैं इनसे क्षमा मांगता हूं। अब कुछ नहीं पूछूंगा—बस, चुप ही भली।''

लेकिन कछुए के इस सवाल पर बिफर पड़े मुल्लाजी, कछुराम से बोले, ''पंडित कछुरामजी, आपको यह भ्रम हुआ है कि प्रोफेसर साहब ने आपको गालियां दी हैं। ये तो अपने इल्म के, जिसे आप विद्या कहते हैं, हुदूदरबा (सीमा-रेखाएं) बता रहे थे।''

'हुदूदरबा' कछुए ने बिना सोचे-समझे पूछ लिया। ''हुदूदरबा अथवा चौहदी यानी यह विद्या चारों तरफ कहां तक फैली हुई है।''

''अथवा अपनी विद्या की सीमाएं बता रहे थे। समझे, हम समझे!'' कछुए ने कहा।

मुल्लाजी और कछुराम यह सब कह रहे थे और प्रोफेसर कपचाक अपनी छड़ी घुमाए जाते थे और चुप थे। अंत में बोले, ''मौलाना, खेद है, इस कछुए और खरगोश के संबंध में, सम्भव है, साहित्य के प्रोफेसर आपके दोस्त इनकी सहायता कर सकें। मुझे असमर्थ जानकर क्षमा कर दीजिए और हां, वापस नहीं लौटना, बहुत वक्त हो गया।''

''अच्छे झमेले में फंसे हम तो,'' कछुए ने कहा, ''फिर, अब देखूं, साहित्य वाला क्या कहता है। कहीं वह भी गरम न होने लगे। एक सीधी-सी बात पूछता हूं और कोई नहीं बताता। न जाने कैसी विद्या है इन विद्वानों की। अब देखूं, कल क्या होता है!''

मौलवी गुफरान की रुचि कछुए के सवाल में बढ़ती जा रही थी। पाठशाला में वापस आये तो पहले न नहाए, न धोये, न नाश्ता किया, सीधे डॉ. फिलफौर के कमरे पर पहुंचे। डॉ. फिलफौर को बहुत आश्चर्य हुआ कि आज सबेरे-सबेरे मौलाना कैसे भूल पड़े। मौलाना गुफरान ने 'अस्सलामोअलेकुम' हलक से जो निकाला तो ये चौंक पड़े। बोले, ''मौलाना, आज कैसे अपने चरणकमलों से इस स्थान को पवित्र किया है? आइए-आइए, तशरीफ रखिए।

''कुशल तो है, कहिए,'' डॉ. फिलफौर ने कहा।

मौलाना बोले, ''मैं सुबह-सुबह टहलने के लिए नदी पर जाता हूं। वहां एक कछुए से मुलाकात हुई।''

''कछुए से! आपने क्या कहा—कछुए से? बेचारा बड़ा नेकदिल, भला-सा बूढ़ा है, बड़ी उलझन में फंसा है। मुझसे एक बात पूछी, वह धर्मशास्त्र संबंधी न थी, इसलिए मैं तो जवाब न दे सका। दूसरे दिन प्रोफेसर कपचाक को लेकर गया। वह प्रश्न भूतकाल की एक घटना से संबंधित था। मैं समझा कि भूतकाल के भेदों को जानने वाले और उसके साक्षी इतिहासकार ही होते हैं। उस गरीब कछुए ने उनसे वही सवाल किया। ये तो ऐसे बिगड़े कि मेरा दिल धड़कने लगा और मैं 'हे भगवान, हे भगवान' पुकार उठा। वे समझे कि उस बूढ़े ने जान-बूझकर उनका अपमान किया है और उनसे अधिक उनके विषय को तुच्छ समझा है। वह ऐसा भाषण दिया कि कछुआ तो कछुआ, मेरे भी छक्के छूट गये। उस गरीब का सवाल जहां का तहां रहा।''

''तो मैं क्या कर सकता हूं मौलाना?''

''प्रो. कपचाक जब जरा ठंडे हुए तो उन्होंने यह बताया कि सवाल कथा-कहानियों से संबंधित है, अर्थात अदब से संबंध रखता है। इसलिए किसी अदब के विशेषज्ञ से पूछा जाए। मैं नदी से सीधे आपके पास आया हूं कि कल मेर साथ थोड़ी देर के लिए चलिए। उस बूढ़े कछुए को संतोष हो जाए।''

''तो मौलाना, सवाल आखिर क्या था?''

''सवाल उसका यह है कि प्राचीन काल में कभी खरगोश और कछुए में दौड़ हुई थी कि नहीं और हुई तो जीत किसकी हुई, इसका प्रामाणिक उत्तर चाहता है।''

''ओह, वही ईसपवाली कहानी! चलूंगा, आपके कहने पर अवश्य चलूंगा। अच्छा हुआ कि आपसे सवाल पूछ लिया। बहुत अधिक अध्ययन के कारण स्मरण-शक्ति दुर्बल हो गयी है। समय पर अपने साहित्य के इतिहास के नोट देख लूंगा और प्रश्नकर्ता को विस्तार से समस्त जानकारी दे दूंगा।''

''बहुत अच्छा, तो अब मैं चलूं। कल सबेरे आपको लेने आऊंगा।''

अगले दिन सुबह नदी पर दोनों विद्वान पहुंचे तो कछुआ न जाने कब से प्रतीक्षा में बैठा था। स्वागत के लिए इंच दो इंच आगे बढ़ा, दुआ-सलाम हुई और मौलाना ने उससे कहा, ''अपने वचन के अनुसार साहित्य के एक बड़े जानकार को साथ लाया हूं। साहित्य का सारा हाल इन्हें मालूम है। अब इनसे अपनी बात पूछ लो।''

कछुए ने कहा, ''पंडितजी महोदय, हमारा प्रश्न यह है कि आपकी पुस्तकों में कहीं लिखा है कि पुराने युग में खरगोश और कछुए की दौड़ हुई थी कि नहीं और हुई थी तो जीत किसकी हुई थी, सचमुच कौन जीता था? मुंहदेखी मत कहना, पंडितजी महोदय। खरी-खरी बात हमें बता दो कि कौन जीता था।''

डॉ. फिलफौर साहित्य के प्रोफेसर थे, तुलनात्मक भाषा विज्ञान से उन्हें बहुत लगाव न था। पंडितजी महोदय और प्रश्न—दोनों पर खटके और मौलाना की तरफ अभियोग-भरी दृष्टि से देखा। मौलाना ताड़ गये। जब कछुए ने अपना वाक्य पूरा किया तो उन्होंने डॉ. फिलफौर से कहा, ''इन्होंने आपको 'पंडितजी महोदय' आदर में कहा है। आप तो इनकी बातों के संदर्भ से ही अगला-पिछला सब समझ गये होंगे।'' *...क्रमशः अगले अंक में*

सन्ध्या नवोदिता की तीन कविताएं

आखिर जुगनू भी उड़ जाता है

आजकल मैं भूल गयी हूं सही रास्ते
जो सही लोगों या चीजों की तरफ जाते हैं
मसलन खून का छितराया हुआ
बड़ा धब्बा देखती हूं
और पास जाने पर
वहां कश्मीर मिलता है

कतारें देखती हूं कि खुशी बंट रही होगी
और वहां एक एक करके सौ से ज्यादा
लाशें गिर जाती हैं
आंख भर देखती हूं अपना देश
और भारत एक आंसू बन जाता है
प्यास भर पानी के लिए
हाथ बढ़ाती हूं
समन्दर ऊपर ही चढ़ा आता है

जैसे में नींद की तलाश में
चाय तक पहुंचती हूं
चाय से खबरों तक
और खबरें फिर किसी तकलीफ का
नाम बन जाती है

जो डॉक्टर बन के दवा दे रहा
वह दरअसल नेता का भतीजा है
और जो प्रेमी के वेश में है
वह अपनी लेट हुई ट्रेन के इंतजार में
प्रेम गीत गाता है
चांद भी आग के तीर रख आजकल
बाग को रोज झुलसाता है
उम्मीद रचने निकलती हूं घर से
अचानक सूरज ही बुझ जाता है
सपने देखने के लिए लाइट
ऑफ करती हूं और
फिर आखिरी जुगनू भी
उड़ जाता है।

कौआ हंकनी नहीं बनेगी रानियां

इन साठ दिनों के लिए
मेरे पास साठ कहानियां और
कविताएं हैं
कहानी खत्म करने को
जैसा आप सब जानते ही हैं
राजा-रानी दोनों मरते हैं
पुरानी कहानी के राजा के पास
बड़ी रानी थी
फिर मंझली
फिर कोई छोटी रानी
कोई रानी षड्यंत्र बुनती थी
कोई रानी कौआ हंकनी बनती थी

इस बार किसी रानी को
कौआ नहीं हांकना
इस बार राज में दखल का
मान पत्र लेकर आयी हैं रानियां
रानियां अब कोप भवन में
नहीं जातीं
तिरिया चरित्र नहीं रचतीं
वे अपने लिए महल नहीं चाहतीं
रानियां अब खुद भी युद्ध और
कूटनीति सीखती हैं

इस बार रानियां पुत्र प्रसूताएं
ही नहीं होंगी
वे जनेगी संतान अपनी

इस बार देखते जाइए
राजा-रानी को मरना नहीं होगा
राजा हजार बहाने बनाकर
हरम नहीं भरेगा
इस बार कोई रानी
कौआ हंकनी नहीं बनेगी
इस बार राजा खुद भगायेगा कौए
रानियां हंसेंगी
राजा की लोलुपता पर
उसके षड्यंत्र रख लेंगी मिलकर
इस बार राज्य षड्यंत्र का नहीं
न्याय का साक्षी बनेगा।

जिन्दगी मृत्यु का पूर्वाभ्यास है

सुनो जोगी
जीवन और मृत्यु दो समानार्थी शब्द हैं
व्यर्थ बुरी तरह जलाती हैं
शांति दरअसल धड़कनों का रुक जाना है
और लाल अब सिर्फ लहू है

रास्ते जैसा कुछ होता नहीं
प्रेम के अर्थ चौराहों पर
सर धुनते हैं
जोगी तुम विजोग के माहिर
सप्तऋषि जाने किस तन्द्रा में
सोते हैं।

काला रंग बहुत भारी है
ब्लैक होल सा शक्तिशाली
सब कुछ निगलता चला जाता है
मन एक भारी पत्थर है और
तन इस आत्मा पर बोझ
अधूरापन एक स्थाई विशेषता

सुनो जोगी
जिन्दगी मृत्यु का पूर्वाभ्यास है
सूर्योदय में निखरती हैं
अस्ताचल की भंगिमाएं
भूगोल के पार कहीं
एक मन बसता है। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।